दूसरा आदम

नीरजसिंह

धरती प्रकाशन

प्रकाशक : धरती प्रकाशन, गंगाशहर, बीकानेर-334001/मुद्रक : एस० एन० प्रिंटर्स, नवीन शाहदरा, दिल्ली-32 / प्रथम संस्करण : 1985 / मूल्य : तीस रुपये मात्र/आवरण : चंचल।

Doosara Aadam (*Short Stories*) : Niraj Singh
Price : 30 00

नीरजसिंह की कहानियां

'दूसरा आदम' नाम से नीरजसिंह का यह पहला ही कहानी-संग्रह है लेकिन समकालीन कहानी के पाठको के लिए यह कोई अपरिचित नाम नही है। नीरज की कहानिया पिछले कुछ बरसों मे हिंदी की महत्त्वपूर्ण लघु साहित्यिक पत्रिकाओं मे प्रकाशित होती रही है। इन कहानियो ने सभी का ध्यान आकर्षित किया और इस छोटी-सी अवधि मे लगभग एक दर्जन कहानियों के बल पर ही उन्होंने समकालीन कहानी मे अपनी अलग पहचान बनाई है। इसी कारण इसराइल, रमेश उपाध्याय, रमेश बत्तरा, सुरेश कांटक, सुरेन्द्र मनन, असगर वजाहत, काशीनाथसिंह, स्वयप्रकाश, नमितासिंह, उदय प्रकाश, राजेश जोशी, प्रदीप मांडव, पंकज विष्ट, धीरेन्द्र अस्थाना, बलराम, इश्फाक, सहीराम, महेश कहारे, विनय कराडे जैसे कहानीकारों की जो नई पीढ़ी इस बीच नये रूप में उभरकर सामने आई उनमे नीरजसिंह एक महत्त्वपूर्ण नाम है।

संग्रह की सीमाओ के चलते उनकी केवल आठ कहानियां ही इसमे संकलित है। इनके आधार पर नीरजसिंह की कहानियो के सबंध मे मुकम्मल रूप से कुछ कहना उचित नही होगा। वैसे भी भावी सभावनाओ से भरे कथाकार की प्रारंभिक कहानियां पर कोई मूल्य निर्णय देना सभव नही है। अधिक से अधिक उनके माध्यम से उन सभावनाओं और दिशा की तलाश की जा सकती है जो ये कहानिया उजागर करती हैं।

सबसे पहली चीज जो इन कुछेक कहानियों से ही साफ होती है वह है कथाकार का विविध और व्यापक फलक। हर कहानी किसी नये विषय, जीवन के घटना व्यापार को उठाती है। 'मंतव्य' कहानी कारखाने मे मामा की सिफारिश पर मुश्किल से काम पाए ऐसे व्यक्ति के व्यक्तित्वांतरण की कहानी है जो संघर्ष कर रहे मजदूरो की एकता और न्याय के सामने अपनी सारी मजबूरियो, सारी कायरता, सारी निजी स्वार्थपरता को छोड उनकी

लडाई मे शामिल हो जाता है। इस तरह उसमें वर्ग-चेतना का विकास होता है। 'क्यो' कहानी मे जातिगत उत्पीडन को सामने लाकर अंत मे लेखक मोची जाति के घनीमानी मौजिम मोची की ऊची जात वालों मे पहुंच के जरिए जाति के आधार पर बने भेद की निरर्थकता के विरुद्ध विद्रोह करते गरीब ग्रामीणो की एकता का रास्ता दिखाता है। 'चक्रव्यूह टूटेगा' मे पुलिस अधिकारी विनय के माध्यम से देश के सविधान और कानून को अपने पक्ष मे परिभाषित कराने पूजीवादी और सामती स्वार्थों का खुलासा हुआ है जो देश की सत्ता मे हिस्सेदार हैं। 'करिश्मा' के मत्रीजी हमारे सत्तासीन राजनेताओं के ऐसे मजे हुए खिलाडी हैं जो इस नौटकी के माहिर अभिनेता हैं कि विरोध की फिजा को चुनाव के मौके पर अपने पक्ष मे कैसे मोड़ा जाय। 'किसलिए, किसके लिए, क्यो' में प्रशासनिक भ्रष्टाचार से हुए युवा आदोलन को दबाने के लिए भेजे गए सफल अधिकारी की दुर्गति का वर्णन करके सहानुभूति मे गोली चलाने के आदेश की अवज्ञा करती हुई पुलिस है। 'इस बार फिर' का गनेसी जवान पुत्र के मृत्यु के गम मे असहाय बना छोटी जाति का व्यक्ति है जिसे मजबूर होकर कडकती धूप मे पडित की सौगात का भारी बोझ पाच कोस तक ले जाना और वापस लाना पडता है। कही से भी मजदूरी नही मिलती। 'प्रतिपक्ष' मे सत्ता-च्युत होकर विरोध पक्ष मे बैठी पार्टी द्वारा शासन के विरुद्ध छेडे जाने वाले आंदोलन की योजना के बहाने लेखक उनके तमाम हथकडो से पाठक को परिचित कराता है। 'दूसरा आदम' मे भिखारीसिंह के माध्यम से लेखक ने गावो मे चुनाव के दौरान संपन्न लोगो द्वारा सविधान-प्रदत्त अधिकारों से लोगो को वचित किए जाने की कहानी है। अत मे भिखारीसिंह तमाम व्यवस्था को चुनौती देता खडा है।

यो केवल कथा के रूप मे देखने पर यह लग सकता है कि इसमे जितने भी विषयो को लेखक ने उठाया है उनमें कोई नयापन नही है। ये विषय पहले भी कितनी ही बार अलग-अलग कोणो से हिंदी कथा-साहित्य मे उठाए जा चुके हैं। और गहराई मे जाकर देखें तो ऐसी अनेक कहानियों का हवाला भी दिया जा सकता है जिनमे इन्हीं वस्तुस्थितियो को अधिक विस्तार, आतरिक जटिलताओ और अंतर्विरोधों के साथ प्रस्तुत किया गया

है बहस का मुद्दा यह नहीं है कि इन वस्तु स्थितियों के प्रस्तुतीकरण में लेखक ने क्या नई बात पैदा की है। ध्यान देने की बात यह है कि अपनी इन प्रारंभिक कहानियों में ही उसने जीवन की कितनी व्यापक वास्तविकताओं को समेटा है और किसी कहानी को दुहराव नहीं बनने दिया है। एक नये लेखक की जीवन के इतने पक्षों पर एक जैसी पकड़ इस बात का संकेत है कि वह कहानी में विषयगत विविधता को बचाए रख सकता है।

इन सभी कहानियों को एक साथ पढ़कर इस बात का अहसास हुए बिना नहीं रहेगा कि हर कहानी एक अलग प्रयाण-बिंदु से शुरू होकर एक ही गंतव्य पर पहुंचना चाहती है। उनमें कुछ लोग हैं जो अपनी मध्यवर्गीय चेतना को छोड़ सर्वहारा चेतना में व्यक्तिरवारित होते हैं, समाज में चले आ रहे जातिगत बटवारे से मुक्त होकर वर्ग-विभाजन पर पहुंचते हैं, धनी वर्गों द्वारा रचे कुचक्र को अपने अनुभव से काट व्यवस्था-विरोध की गुहार लगाते हैं। सत्ताधारी वर्गों, समाज में उनके वर्चस्व, राजनीतिक दलों और नेताओं के रूप में उनकी उपस्थिति को अच्छे ढंग से उद्‌घाटित करने वाली भी कुछ कहानियां हैं। इसलिए ऐसा लग सकता है कि इन कहानियों में विषयवस्तु उतनी महत्त्वपूर्ण नहीं जितना स्वयं लेखक का विचार-विवेक। ऐसा सोचने वाले लोग भी होंगे जो कहें कि दरअसल सभी कहानियों की रचना विचार के एक सुसंगत ढर्रे पर हुई है जिसमें महत्त्वपूर्ण बात एक पूर्व-निर्धारित्त निष्कर्ष पर पहुंचना रहा है। और क्योंकि रचना में विचार या विचारधारा के प्रयोग से अनेक बार बड़े-बड़े विचारवान् लोग भी बिदक जाते हैं इसलिए उस आधार पर इन कहानियों को भी फारमूलाबद्ध कहने में संकोच नहीं होगा। यू विचारधारा से कहानी गढ़ने और कहानी में एक सुसगत विचार के होने के फर्क को चीन्हना बहुत जरूरी है। नीरज की अधिकांश कहानियों में भरे-पूरे संदर्भो में उपस्थित जीवन-यथार्थ इस धारणा को गलत सिद्ध करने के लिए पर्याप्त है कि उनका निर्माण विचारधारा मात्र से हुआ है। हां, जीवन के हर पहलू को रखने और विकसित करने का उसका अपना एक नजरिया है जिसे उसने छुपाने की कोशिश प्रायः नहीं की है।

इन कहानियों की एक और खूबी है उनका ठोस संदर्भ। आज भी ऐसी

कहानियां कम नहीं लिखी जा रही जिन्हें पढ़कर देश और काल का अंदाजा लगाना अक्सर मुश्किल होता है। उनमें लगता है कि लेखक देश और काल के ठोस संदर्भों से यकायक मुक्त हो सार्वदेशिक और सार्वकालिक हो गया है। इसकी परिणति अंततः कहानी का जीवन के यथार्थ से रिश्ता टूटने में होती है। गनीमत है कि नीरजसिंह की अधिकांश कहानियां इस 'अंतर-राष्ट्रीयता बोध' की इस शाश्वतता से मुक्त हैं। ऐसी शाश्वतता चाहे मानव-वृत्तियों को लेकर हो या जीवन-स्थितियों को लेकर, कोई काम्य वस्तु नहीं। इन कहानियों के आर-पार उस ठोस देश-काल को सहज ही पहचाना जा सकता है जहां से लेखक ने उन्हें लिया है।

इन कहानियों को पढ़कर यह तथ्य छिपा नहीं रह सकता कि इनकी संरचना सीधी, सहज और सरल है। कहानी के साथ आकस्मिकता, जिज्ञासा और अप्रत्याशित घटने की जो बातें शुरू से जुड़ी चली आ रही हैं उनसे संस्कारित पाठकों को इस रचना-पद्धति से निराशा भी हो सकती है। अब इसे विचार का प्रभाव कहिए या विकट जीवन-स्थितियों के प्रस्तुतीकरण का दबाव कि आज का कहानीकार कहानी रचना की इन परंपरा-प्रतिष्ठित बातों को या तो गैर-जरूरी समझता ही नहीं या उन पर पर्याप्त ध्यान नहीं दे पाता है। उन्हें बनाए रखने या और विकसित करने के सुझाव पर बहुतों की असहमति हो सकती है। लेकिन किसी विधा की रचना की शर्तों के प्रति पूर्ण अवहेलना का भाव तब तक सराहनीय नहीं कहा जा सकता जब तक हम उसका कोई अन्य विकल्प न तलाश लें। नीरज की कहानियों में कहानी-रचना के इन प्रासंगिक तत्वों के उपयोग के प्रति उदासीनता कुछ खटकती अवश्य है, लेकिन लेखक ने उनकी पूर्ति यथार्थ के प्रभाव से करने की कोशिश की है।

आशा है हिन्दी पाठकों को युवा कहानीकार नीरजसिंह की ये कहानियां उसी तरह आकर्षित करेंगी जैसे उसने साहित्य-जगत को किया है। इन कहानियों के माध्यम से वे हमारे देश के यथार्थ, उसमें जूझते और रास्ता खोजते हुए व्यक्तियों और समूहों का रचनागत चित्रण ही नहीं उनमें कथाकार की संभावनाओं का दर्शन भी करेंगे।

164, टैगोर पार्क
दिल्ली-110009

—कर्णसिंह चौहान

क्रम

दूसरा आदम

(कहानी-संग्रह)

मंतव्य

वह आवाज जैनेन्द्र त्रिपाठी की थी जिसमें मुझे रुकने के लिए कहा गया था। मैंने पलट कर देखा—त्रिपाठी लगभग दौड़ते हुए मेरी ओर चला आ रहा था। वहीं रुक कर मैं उसकी प्रतीक्षा करने लगा। त्रिपाठी के साथ एक और आदमी भी था। उसने चादर ओढ़ रखी थी और पहचान में नहीं आ पा रहा था।

त्रिपाठी के निकट आ जाने पर मैंने उसके साथ के आदमी को पहचान लिया। वह हमीद कुरैशी था। त्रिपाठी के सामने वाली मेज पर बैठता था। कभी-कभार फाइलों के लौटने में देर होने पर मुझे उसके पास जाना पड़ता। लेकिन दफ्तर के बाद कभी भी मैं उसके सम्पर्क में नहीं रहा था और हमारी परस्पर बातचीत भी मात्र औपचारिक ही थी।

मैंने उन दोनों को एक साथ नमस्कार किया। हाथ जोड़ने में विशेष श्रद्धा जैसी कोई भावना नहीं थी लेकिन चूंकि दोनों ही ओहदे में मुझसे बड़े थे, इसलिए उनके प्रति सम्मान का भाव तो मुझे व्यक्त करना ही था।

आज पहले ही निकल आये ? त्रिपाठी ने कहा।

हां, यू ही जी में आया चला आया। मेरे स्वर में लापरवाही का पुट था।

वे दोनों बेमतलब की हँसी हँसने लगे। उनकी हँसी में बनावटीपन की झलक थी, जिससे मैंने अंदाज लगाया कि मुझसे किसी बात पर सहमति पाने के इरादे से वे मेरे पास आये थे। चेहरे पर हलकी मुस्कुराहट का भाव लाते हुए मैंने पूछा—कोई विशेष बात है क्या त्रिपाठी जी ?

मेरे प्रश्न से उनकी हँसी थम गई और दोनों गम्भीर हो गये। थोड़ी

देर बाद त्रिपाठी ने कहा—दरअसल ठाकुर साहब, हमें आपसे कुछ विशेष बातें करनी थी।

कहिए, और मैं धीरे-धीरे आगे बढ़ने लगा।

त्रिपाठी ने जो कुछ कहा, उसका मतलब मात्र यह था कि ये लोग कुछ मांगों को लेकर पूरे कारखाने में हड़ताल कराने जा रहे थे और इसी उद्देश्य से एक यूनियन बनाने का विचार लेकर मेरे पास आये थे।

लेकिन अपने यहां तो पहले से ही यूनियन है?

हां, है तो लेकिन निष्क्रियता के कारण उसका होना न होना कोई अर्थ नहीं रखता।—त्रिपाठी ने कहा।

तो फिर उसी को सक्रिय बनाइये न?

हां, विचार तो यही था, लेकिन माधो बाबू से बातें करने पर वे कहते हैं कि जब मैनेजमेंट खुद ही कर्मचारियों को सारी सुविधाएं मुहैया करता जा रहा है, तब फिर यूनियन, हड़ताल और घेराव की क्या आवश्यकता है?

ठीक ही तो कहते हैं वे। जब गांधीजी के रास्ते पर चलने से ही सब-कुछ हासिल हो जाता है, तब फिर यह कम्यूनिस्टों वाले चोचले अपनाने से क्या फायदा?

देखिए ठाकुर साहब, त्रिपाठी ने कहा—आप खुद समझ रहे होंगे कि मैनेजमेंट हम कर्मचारियों को कितनी सुविधाएं दे रहा है। केवल माधो बाबू, हरिद्वार बाबू और अमरेश चक्रवर्ती ही तो कर्मचारियों की पूरी जमात नहीं हैं न? ये लोग यूनियन के महत्त्वपूर्ण पदों पर हैं और मैनेजमेंट के साथ इनकी अच्छी पटती है। ये लोग डाइरेक्टरों के साथ उठते-बैठते हैं। बड़े-बड़े अफसरों के साथ पार्टियों में शामिल होते हैं। इतना महत्व देने के साथ-साथ मैनेजमेंट इन लोगों का पेट भी भरता है। ऐसे में उन लोगों को दूसरे कर्मचारियों की असुविधाओं का ध्यान कैसे आयेगा? अब आप ही बताइये, नयी यूनियन बनाये बगैर काम कैसे चलेगा?

त्रिपाठी की बात का कुछ प्रभाव मुझ पर पड़ा हो, ऐसी बात नहीं थी, अतः केवल उन्हें टालने के लिए मैंने कह दिया—ठीक है, तब बनाइये नई यूनियन!

त्रिपाठी और कुरैशी, दोनों के चेहरे खिल उठे। दोनो ने एक ही साथ पूछा—तब फिर आप सहयोग देंगे न ?

देखिये त्रिपाठी जी, मैं इसका वायदा नही कर सकता। आप खुद ही समझ सकते है कि मैं मैनेजमेंट के कितने करीब का आदमी हूं। ऐसी स्थिति मे मेरा आप लोगो के साथ सहयोग करना मेरे हक में अच्छा नही रहेगा।

मगर शालिग्राम बाबू, यह स्थिति तो हम मे से प्रत्येक के साथ है। फिर भी, अपनी मांगों की पूर्ति के लिए हमे संघर्ष तो करना ही पड़ेगा ! और संघर्ष की स्थिति मे ऐसे खतरे तो होंगे ही।

लेकिन मैं यह खतरा नही उठा सकता। आप इसे मेरी मजबूरी समझ सकते हैं। मैंने स्वयं को स्पष्ट कर दिया।

वे लोग मेरी ओर से निराश हो चले थे। जाते-जाते त्रिपाठी ने फिर कहा—खैर, जरा सोचियेगा।

मैं सोचने की जरूरत नही समझता।

फिर भी।

खैर ! मैंने कहा और झटके से चल पड़ा।

अगले दिन काम पर पहुंचने पर पता चला कि नई यूनियन का गठन हो चुका। त्रिपाठी अध्यक्ष है और कुरैशी सैक्रेटरी। पीटर को यूनियन का ज्वाइंट सैक्रेटरी बनाया गया था। यह सब-कुछ बतलाते समय भाटिया ने यह भी बताया कि कल शाम को जब नई यूनियन का गठन हो रहा था, तब भारी संख्या मे लोग वहां उपस्थित थे। नही रहने वालों मे हम कुछ लोग ही थे। हम कुछ लोगों का मतलब महज बीस-पच्चीस लोग।

दोपहर में जब आधे घंटे की छुट्टी हुई तो माधो बाबू मेरे पास आए—ठाकुर, तुमने बहुत अच्छा किया जो उन हरामियो की यूनियन मे शामिल नही हुए। हमे क्या गरज पड़ी है हड़ताल-वड़ताल करने की ! ठीक है न ?

तब मैंने मुस्कुरा भर दिया था, लेकिन माधो बाबू की बात मेरे अन्दर कही चुभ गई थी। फिर भी मैं चुप ही रहा। कुछ कहना मेरे वश की बात नही थी क्योंकि अभी नौकरी मे आए मुझे कुछ ही दिन हुए थे। और माधो

बाबू ! उनकी गिनती यहाँ के धाकड़ों में होती थी। मुझे यह कबूल नहीं था कि किसी छोटी-सी गलती के कारण मेरी नौकरी खतरे में पड़ जाये। इसी नौकरी के लिए न जाने कितने पापड़ बेलने पड़े थे मुझे।

त्रिपाठी की यूनियन ने परसों मैनेजमेंट के सामने अपनी माँगें रखी थी। मैनेजमेंट की ओर से यूनियन की मांगों पर जो प्रतिक्रिया व्यक्त की गई, उसके अनुसार यूनियन के सभी पदाधिकारियों को मुअत्तल कर दिया गया था तथा भाटिया समेत अन्य कई लोगों से इस बात के लिए कैफियत तलब की गई थी कि ड्यूटी के समय क्यों इन्होंने यूनियन की बैठक में भाग लिया और क्यों नहीं इसके लिए उन्हें नौकरी से अलग कर दिया जाये।

जब बाहर नोटिस-बोर्ड पर मैनेजमेंट के इन फैसलों की सूचनाएं चिपकायी गयी, तब माधो बाबू मेरे निकट आये। बोले—अब इन सालों के होश ठिकाने आ जायेंगे ठाकुर। बड़े आये थे यूनियन बनाने। चोट्टे कहीं के!

मुझे बुरा लगा। बोला—माधो बाबू, यूं बेवजह मुझे गालियां अच्छी नहीं लगतीं। उनके जी में जो आये, वह करें। हम भी अपनी मर्जी के मालिक हैं, जैसा उचित समझेंगे करेंगे।

माधो बाबू को मेरी बात से ताज्जुब हुआ। लेकिन थे वे घाघ आदमी, जाते-जाते बोले—आप ठीक ही कहते हैं शालिग्राम बाबू, हम क्यों गालियां देकर अपना मुंह खराब करें। करें वे साले, जो उनके जी में आये।

उनकी आदत पर मुझे हँसी आ गई। कारखाने के कर्मचारियों पर बिला वजह रोब गांठना उनकी आदत हो गई थी और उनकी समझ में शायद बगैर गालियों के यह बात हो नहीं सकती थी।

हम लोगों ने यह समझा था कि मैनेजमेंट द्वारा सख्ती बरतने के कारण कर्मचारियों का मनोबल गिर जायेगा और वे ठंडे हो जायेंगे। लेकिन ऐसा नहीं हुआ। तीसरे दिन शाम को नई यूनियन वालों की एक बड़ी सभा हुई, जिसमें यह निर्णय लिया गया कि मैनेजमेंट द्वारा कर्मचारियों की मांगों की उपेक्षा और उसकी दमनात्मक कार्रवाइयों के विरोध में अगले दिन से सारे कर्मचारी अनिश्चितकालीन हड़ताल करेंगे।

उसी दिन रात को माधो बाबू और हरिद्वार बाबू मेरे यहां आये।

नारे लगाने वाले लोग हमारे निकट आ गये—आप लोग कहां जा रहे हैं माधो बाबू ?

माधो बाबू की त्यौरी चढ़ गई—तुम्हें दिखाई नही देता ? हम लोग ड्यूटी पर जा रहे हैं ।

लेकिन आज तो हड़ताल है । इसलिए कोई भी कर्मचारी काम पर नही जायेगा—त्रिपाठी ने कहा ।

हमें हड़ताल से कोई मतलब नही है ! माधो बाबू ने कहा ।

तभी पीटर सामने आया—ऐसा मत कहिए माधो बाबू, आखिर हम लोग अपने लिए ही तो यह सब नही कर रहे हैं । इससे तो हम सभी को फायदा होगा ।

जो भी हो, हम लोग काम पर जायेंगे ही ! कहकर माधो बाबू आगे बढ़ने लगे ।

एकाएक कई लोग सामने जमीन पर पड़ गये । त्रिपाठी ने कहा—ठीक है, जाना ही है तो हमारे ऊपर से जाइये । हम नही समझते थे कि आप इतने गिरे हुए आदमी हैं माधो बाबू ।

माधो बाबू का चेहरा गुस्से से लाल हो गया । बोले—अभी जान जाओगे कि मैं कितना गिरा हुआ आदमी हूं, कहते हुए वे फिर आगे बढ़े । लेकिन अमरेश चक्रवर्ती ने उन्हें पकड़ लिया—छोड़िये भी माधो बाबू, यह सब करने की जरूरत नही है । चलिए, मैनेजर को फोन कर देते हैं । वह पुलिस बुला देगा, फिर देखते हैं कि कौन हमें अन्दर जाने से रोकता है ।

बात माधो बाबू की समझ में आ गई । बोले—हां, यही ठीक रहेगा । फिर सभी लोग सड़क पार करने लगे । मैं भी सिर झुकाए पीछे-पीछे चलने लगा । तभी किसी ने मेरा हाथ पकड़ कर अपनी ओर खींचा । देखा—भाटिया था । धीरे से बोला—जरा मेरे साथ आओ, तुमसे कुछ जरूरी बातें करनी हैं ।

मैंने अपने साथियों को एक नजर देखा, फिर भाटिया के साथ गेट से थोड़ी दूर चला गया ।

भाटिया मेरे निकट का व्यक्ति था । हम दोनों पड़ौसी थे । कारखाने के क्वार्टरों में साथ-साथ रहते थे, इसलिए आपस में काफी घनिष्ठता थी ।

तुम बहुत ही डरपोक आदमी हो यार ! भाटिया ने कहा और हंसने लगा—आखिर हड़ताल में शामिल हो जाने पर कोई तुम्हारी जान तो नही ले लेता ।

यही समझ लो, मैंने तीखे स्वर में कहा—तुम लोग मेरी मजबूरियां तो समझते नही । खामखां हीरो बनने लगे हो । आखिर तुम्हें समझना चाहिए कि मैं अपने घर मे अकेला कमाने वाला हूं। गाव में मा है, भाई है, बहिन है। यहा पत्नी है, बच्चे हैं। सभी के भरण-पोषण की जिम्मेवारी मुझ अकेले आदमी पर है। अब तुम्ही सोचो, अगर मुझे भी नौकरी से निकाल दिया गया, तब तो इतने लोगों को भूखों ही मरना पड़ेगा न ? गाव के दो-तीन बीघे खेत से क्या होगा ?

देखो यार, भाटिया कहने लगा—मैं तुमसे हड़ताल में शामिल होने के लिए तो नही कह रहा हू, लेकिन इतना जरूर कहूगा कि जिन परिस्थितियों में तुम जी रहे हो, हम लोग भी लगभग उन्ही के बीच घिरे हुए हैं। मुझे ही लो'''तुमने तो घर के लोगो को अपने पर आश्रित बताया जब कि उनके पास थोड़ी-सी जमीन भी है। लेकिन मेरे पास ? मेरी जमीन तो पार्टीशन के समय पाकिस्तान मे ही रह गई और यहां आने के बाद पिताजी ने हमारे लिए अगर कुछ किया तो बस यही कि मुझे बी० ए० तक पढ़ा दिया और दीदी की शादी कर दी। देखते हो न, मुझ पर कितने लोगों का बोझ है ? विधवा मां है, जवान छोटी बहिन है, पत्नी है, तीन-तीन बच्चे हैं। सोचो, कहां हूं मै तुमसे अलग ? बिल्कुल एक से तो हालात हैं हमारे। हैं या नही ? मुझे उलझन-सी महसूस होने लगी भाटिया की बातो से । बोला—बातें तो तुम ठीक कहते हो यार, लेकिन मैं हड़ताल मे शामिल नहीं हो सकता। तुम नही समझ सकते कि किन परिस्थितियों मे मुझे नौकरी मिली है और मैनेजमेंट मुझ पर कितना विश्वास करता है।

तभी पुलिस की गाड़ी आ गई। उसके कुछ ही क्षणों बाद पुलिस वालों के साथ हम लोग कारखाने के अन्दर दाखिल हो गये। लेकिन हड़ताली कर्मचारी इस समय भी चुपचाप नहीं रहे। वे जोर-जोर से नारे लगाते रहे—मैनेजमेंट के चमचे मुर्दाबाद !

हड़ताली कर्मचारियों के लिए मेरे मन में पूरी सहानुभूति थी, फिर

भी मेरे लिए हड़ताल मे शामिल हो पाना सभव नही था। इसका कारण यह था कि जिन परिस्थितियों मे मुझे नौकरी मिली थी, उन्हें देखते हुए इस नौकरी को खतरे मे डालने की वात मैं सोच भी नही सकता था।

बी० ए० पास करने के कितने वरसो बाद मुझे यह नौकरी मिली थी। तब सब ने समझा था कि डिग्री मिलते ही सभी अभावों का अन्त हो जायेगा। मगर नौकरी लाख ढूढने पर भी नही मिली। तब सभी को इस डिग्री की असलियत का पता चला था। इसी डिग्री के लिए मेरे दो बीघे खेत आज भी बधक पड़े थे। बस, पिताजी के नही रहने की स्थिति मे मा को एक ही चिंता थी कि पैसे के अभाव मे उनके बेटे की पढ़ाई न रुक जाये। उनके लिए मेरे बी० ए० पास करने का अर्थ कोई अच्छी-सी नौकरी का मिलना था जैसे।

इक्कीस साल की उम्र मे मैंने बी० ए० पास किया था और तब से चार साल तक सरकारी नौकरी के चक्कर मे सरकारी ऑफिसो के फेरे लगाता रहा था। यह चक्कर तभी बन्द हुआ, जबकि उम्र पच्चीस पार कर गई। अब अगर मुझे नौकरी मिल सकती थी तो केवल प्राइवेट फर्मों मे और ऐसी जगहो पर नौकरी तो बिना तगड़ी सिफारिश के नही लगती।

यह बातें मुझे रिश्ते के एक मामा ने बताई थी। पहले वह भी पूरी तरह गरीब थे, लेकिन जब से बड़े लोगो के दरबारों मे उन्होंने नियमित हाजिरी देनी शुरू की, उनकी काया-पलट होने लगी थी।

जिस कारखाने मे मैं काम करता था, उसका मालिक मामा का कुछ परिचित था। एक बार मालिक को चुनाव लड़ने की सनक सवार हुई। बस, मामा ने सही मौका देखकर मुझे राह दिखा दी और फिर मैं मालिक के काफी निकट हो गया। दिन-रात मालिक के चुनाव-प्रचार मे लगा रहता। अन्तत: उसके कुछ विश्वासपात्र लोगों मे गिना जाने लगा।

चुनाव हुए, फिर चुनाव-परिणाम घोषित हुए और मालिक चुनाव हार गया। दूसरे लोगो के साथ-साथ वह मुझ पर भी काफी बिगड़ा था लेकिन तब तक मैं उसके काफी निकट हो चुका था। बस, मामा ने थोड़ा सिफारिशी धक्का दिया और मैं अपनी भर्ती का परमिट लिए इस कारखाने मे दाखिल हो गया था।

और मेरा सिफारिशी धक्के से दाखिल होना ही आज मेरी विवशता वन गया था।

पत्नी को कारखाने मे चल रही हड़ताल के वारे मे जानकारी हो गई थी। यह भी कि मैं हड़ताल में शामिल नही हूं। काम से वापस लौटने पर बातों-ही-बातों में उसने पूछ लिया—सुना है कारखाने मे हड़ताल चल रही है और तुम अब भी काम पर जा रहे हो!

हां।

क्यो?

मुझे अजीब लगा। कुछ क्षणों तक उसके चेहरे पर दृष्टि टिकाने के बाद बोला—आधे दिन नई साड़ियों के लिए रट लगाती हो, हड़ताल मे शामिल होने पर कैसे आयेगी?

न आये, इससे क्या? साथियो से मुह तो नहीं चुराना पड़ेगा न? आज भाटिया बाबू की पत्नी कह रही थी कि केवल तुम ही काम पर जाते हो।

मैं ही क्यो, कितने ही लोग अपनी ड्यूटी कर रहे है।

उह, कह तो ऐसे रहे हो, जैसे मुझे पता ही न हो। मुझे सब मालूम है। तुम कुछ इने-गिने लोग ही हड़ताल मे शामिल नही हो।

खैर, मुझे झुझलाहट हो आई थी—तुम कहना क्या चाहती हो? मैं अपनी नौकरी से निकाल दिया जाऊ? फिर रोजी-रोटी कैसे चलेगी? कन्हैया की पढ़ाई कैसे होगी, शांति का ब्याह कैसे होगा? बोलो!

तो क्या हड़ताल मे शामिल होने से नौकरी चली जायेगी?

और नही तो क्या? पूछ लिया होता भाटिया की पत्नी से। वेचारे सस्पैण्ड है। मैंने चिढ़ कर कहा।

पत्नी कुछ क्षणो तक चुप रही। फिर वोली—खैर, यह बताओ, हड़ताल वेतन वढाने के लिए ही तो हो रही है न?

हां।

तो अगर हड़ताल सफल हो गई, तब तो तुम लोगो का वेतन भी वढेगा न। लेकिन भला हड़ताल सफल होगी कैसे? तुम लोग तो···खैर, जाने दो।

मुझे गुस्सा आ गया—तुम साफ-साफ क्यो नही कहती कि मैं भी

हड़ताल में शामिल हो जाऊं !

नहीं जी, मैं ऐसा क्यों कुछ कहूंगी जिससे तुम्हारी नौकरी चली जाये। आखिर सब-कुछ तो तुम हमारे लिए ही करते हो न। लेकिन···पत्नी के चेहरे पर हल्की मुस्कुराहट उभर आई थी—लेकिन देखो न, बड़ा अजीब लगता है। जब भी भाटिया की पत्नी यह कहती है कि सारे लोग हड़ताल में शामिल हैं और नहीं शामिल होने वालों में तुम्हारे जैसे चंद लोग ही हैं, तो न जाने क्यों कैसा तो लगता है। जैसे कोई तुम्हें अपराधी ठहरा रहा हो।

मैं पत्नी की बात पर गहरे सोचने लगा था, इसलिए चुप ही रहा। मेरी चुप्पी को पत्नी ने मेरा नाराज होना मान लिया। बोली—लगता है, तुम बुरा मान गये, खैर छोड़ो इस चर्चा को। आओ, तुम्हें अपने बचपन की एक घटना सुनाऊं।

मैं पत्नी के चेहरे पर देखने लगा। वह कहने लगी—जब मैं स्कूल में पढ़ती थी, उन्हीं दिनों की बात है। उस साल बड़ी भारी बाढ़ आई थी। स्कूल दो महीने के लगभग बन्द रहा था। स्कूल खुलने पर बन्द की अवधि की फीस भी लड़कों से देने के लिए कहा गया। लड़कों ने हड़ताल कर दी। उस हड़ताल के दौरान भी कितने ही लोग कक्षाओं में जाते रहे। मैं भी उन्हीं में से एक थी। आखिर में लड़कों की ही बात मानी गई। दो महीनों की फीस माफ कर दी गई। उसके बाद हड़ताली लड़के हम लोगों को बहुत चिढ़ाते थे क्योंकि फीस तो हमारी भी माफ हुई थी। मुझे तो तब बहुत बुरा लगता था। जी में आता था···।

और उसके बाद का वाकया सुनने के लिए मैं वहां बैठा नहीं रह सका। बाहर बरामदे में आकर पत्नी की बातों पर सोचने लगा।

अपनी मेज पर बैठा मैं यूं ही पुरानी फाइलें उलट-पलट रहा था कि कामेश्वर वर्मा और बजरंगीप्रसाद ऑफिस में दाखिल हुए। निकट आने पर मैंने किंचित् आश्चर्य से पूछा—अरे, तुम लोग हड़ताल पर थे न ?

हां थे, मगर आज ज्वाइन कर लिया। वर्मा ने मेरे पास की कुर्सी पर बैठते हुए कहा।

लेकिन तुम लोग तो नेताओं में से थे यारो ! तुम लोगों के ज्वाइन

कर लेने का दूसरे लोगो पर क्या असर पड़ेगा ?

कुछ भी पड़े । हमारे हड़ताल पर जाने का आप लोगो पर क्या असर पड़ा था ? वर्मा ने चुभते हुए अन्दाज मे कहा—आज के चौदहवे दिन भी आप लोग अपनी कुर्सियो पर जमे हुए हैं। हम भला क्यों भूखे रहें ? अगर भूखे रहने की कोई सार्थकता सिद्ध होती हो तो रहा भी जाये। लेकिन यहां तो यह हाल है कि प्यास से एडियां रगड़ते रहो मगर किसी के कान पर जू तक नही रेगती। भाड मे जाये सब-कुछ'''। वर्मा और भी न जाने क्या-क्या बकता रहा।

दोपहर की छुट्टी मे मै अमरेश चक्रवर्ती के पास गया। उसने मेरी ओर देखकर आख मारी और कहा—चलो खुश हो जाओ बेटे, हड़ताल असफल होती जा रही है।

लेकिन मै आज हँसने के मूड मे नही था। मुझे चुप देख कर गम्भीर स्वर मे अमरेश ने पूछा—क्यो ठाकुर, कुछ बात हो गई है क्या ?

हां, सोच रहा हू, हम लोगो के चलते ही हड़ताल असफल हो रही है।

क्या मतलब ? अमरेश के चेहरे पर आश्चर्य के भाव आ गये—तुम कहना क्या चाहते हो ?

यही कि हमे हड़ताल मे शामिल हो जाना चाहिए।

अमरेश कुछ देर सोचता रहा। फिर बोला—कह तो तुम ठीक रहे हो, लेकिन'''।

अब लेकिन-वेकिन कुछ नही, मैंने दृढ़ता से कहा और बाहर निकल आया। कारखाने के मुख्य द्वार पर आकर हड़ताली कर्मचारियो की भीड में खोने से पहले मैंने एक बार पीछे की ओर देखा—तेज कदमों से मेरे पीछे अमरेश चक्रवर्ती चला आ रहा था। उसके पीछे कामेश्वर वर्मा और दूसरे लोग भी थे। नही थे तो केवल माधो बाबू और हरिद्वार बाबू।

हमारी हड़ताल सफलतापूर्वक चल रही थी। हमारी एकता ने मैनेजमेंट को एकदम से बौखला दिया था, जिसके परिणामस्वरूप कर्मचारियों की बर्खास्तगी की सूचनाएं अब दिन मे कई बार नोटिस-बोर्ड पर चिपकने लगी थी। इसी तरह की एक नोटिस मे मेरा नाम भी आ गया था लेकिन

डाइरेक्टर्स की मीटिंग मे जायेंगे। वे लोग चूंकि यूनियन के पदाधिकारी थे, इसलिए उन्हें जाना ही था और मैं इसलिए कि मैनेजमेंट मुझसे सीधे बात करना चाहता था।

लेकिन जब हम वहा गये, तो हमें रोक दिया गया। कहा गया कि अन्य लोगो को बाहर ही रहना होगा। पहले मुझे बातें करनी होगी, त्रिपाठी तैयार हो गया। उसने मुझसे काफी भावुक अन्दाज मे कहा—ठाकुर, तुम्ही जाओ, लेकिन वहां किसी तरह की सौदेबाजी करते समय यूनियन के हितो को भूल मत जाना। वहां किसी भी सवाल पर अपने को अकेला मत समझना और कही भी झुकने की जरूरत नही है।

मैं सिर हिलाकर उस कमरे मे दाखिल हो गया जिसमें कई लोग पहले से बैठे हुए थे। इन सभी लोगों का इस कारखाने मे हिस्सा था। चूंकि आधे से भी अधिक का हिस्सेदार कारखाने का मालिक स्वय ही था, इसीलिए वह बीच वाली सबसे अच्छी कुर्सी पर बैठा हुआ था। वही एक कुर्सी पर मेरे रिश्ते के मामा भी थे। माधो बाबू भी एक ओर बैठे थे।

कमरे मे घुसते ही मुझे उन लोगों की जलती आंखो का सामना करना पड़ा, लेकिन अब मैं अपने आपमे अतिरिक्त दृढ़ता महसूस करने लगा था, इस लिए उन लोगों के सामने तनकर खड़ा होने मे मुझे कोई दिक्कत नही हुई।

सबसे पहले मालिक ही मुझसे मुखातिब हुआ—मि० सिंह, अजीब बात है, आप मेरे इतने निकट के व्यक्ति थे और आप पर मैनेजमेंट का इतना भरोसा था। लेकिन हमारे पुराने खैरख्वाह होने के बावजूद आप हड़ताल में शामिल हुए और मात्र शामिल ही नही हुए, आपने दूसरों को हड़ताल करने के लिए उकसाया भी। क्या आप बता सकते हैं कि आपने ऐसा क्यों किया ?

जी, मैंने मालिक से नजरें मिलाते हुए कहा—बता सकता हू, मगर बस इतना ही कि हड़ताल मे शामिल होना मेरी नियति थी, क्यो कि मेरे जैसे दूसरे लोग हड़ताल पर थे। वैसे मैं इस आरोप से इन्कार करूगा कि मैंने किसी को हड़ताल करने के लिए उकसाया है, यह गलत बात है।

खैर, आप अपनी बर्खास्तगी के संबंध मे कुछ जानना चाहेगे ?

हममे से किसी को भी इसकी चिंता नही थी। पत्नी ने सुना तो मुस्कराने लगी थी।

लेकिन जब मेरी बर्खास्तगी का समाचार मेरे रिश्ते के मामा को मिला तो वे मेरे पास दौड़े हुए आये। कहने लगे—मेरे सारे किये-कराये पर तुमने पानी फेर दिया। खैर, अब भी समय है। चलो, मालिक से माफी माँग लो।

मुझे गुस्सा आ गया उनकी बात पर। बोला—मैं नहीं जाता आपके साथ, और फिर माफी क्यो मागूगा ? हड़ताल की है तो अपने हक के लिए, कोई चोरी-डकैती थोड़े ही की है ?

और मामा अपना-सा मुह लेकर चले गये थे।

दूसरे दिन यूनियन के पास बोर्ड आफ डाइरेक्टर्स की तरफ से समझौता-वार्ता के लिए प्रस्ताव आया। यूनियन ने इस प्रस्ताव को इस शर्त पर मानना स्वीकार किया कि पहले सभी कर्मचारियो की बर्खास्तगी वापस होनी चाहिए। मैनेजमेंट इसके लिए राजी हो गया। लेकिन शाम को जब फिर से नौकरी मे लिए जाने वाले कर्मचारियों की सूची प्रकाशित की गई तो उसमे मेरा और अमरेश चक्रवर्ती का नाम नही था। बस, यूनियन ने समझौता-वार्ता का प्रस्ताव नामंजूर कर दिया।

अगले दिन त्रिपाठी मेरे पास आया। बोला—मैनेजमेंट तुमसे सीधे बात करना चाहता है। यूनियन की भी यही राय है कि तुम्ही हमारे मुख्य प्रवक्ता बनकर मैनेजमेंट से बाते करो। कर सकते हो न ?

कर तो सकता हू लेकिन अकेले मे नही जाऊगा। तुम लोग हमारे नेता हो, इसलिए किसी भी तरह की बातचीत तुम्ही लोगों के माध्यम से होनी चाहिए।

खैर, शाम को यूनियन की कार्यकारिणी की बैठक होगी, उसी मे प्रतिनिधियो के नाम तय किये जायेंगे।—कहकर त्रिपाठी चला गया—तुम भी जरूर आना।

शाम को कार्यकारिणी समिति की बैठक मे यही तय हुआ कि जैनेन्द्र त्रिपाठी, कुरैशी, पीटर और मैं यूनियन के प्रतिनिधि के रूप मे बोर्ड आफ

डाइरेक्टर्स की मीटिंग मे जायेंगे। वे लोग चूंकि यूनियन के पदाधिकारी थे, इसलिए उन्हें जाना ही था और मैं इसलिए कि मैनेजमेंट मुझसे सीधे बात करना चाहता था।

लेकिन जब हम वहां गये, तो हमें रोक दिया गया। कहा गया कि अन्य लोगों को बाहर ही रहना होगा। पहले मुझे बातें करनी होंगी, त्रिपाठी तैयार हो गया। उसने मुझसे काफी भावुक अन्दाज मे कहा—ठाकुर, तुम्ही जाओ, लेकिन वहां किसी तरह की सौदेबाजी करते समय यूनियन के हितों को भूल मत जाना। वहां किसी भी सवाल पर अपने को अकेला मत समझना और कही भी झुकने की जरूरत नही है।

मैं सिर हिलाकर उस कमरे मे दाखिल हो गया जिसमे कई लोग पहले से बैठे हुए थे। इन सभी लोगों का इस कारखाने मे हिस्सा था। चूंकि आधे से भी अधिक का हिस्सेदार कारखाने का मालिक स्वय ही था, इसीलिए वह बीच वाली सबसे अच्छी कुर्सी पर बैठा हुआ था। वही एक कुर्सी पर मेरे रिश्ते के मामा भी थे। माधो बाबू भी एक ओर बैठे थे।

कमरे मे घुसते ही मुझे उन लोगों की जलती आंखों का सामना करना पड़ा, लेकिन अब मैं अपने आपमें अतिरिक्त दृढ़ता महसूस करने लगा था, इस लिए उन लोगों के सामने तनकर खड़ा होने मे मुझे कोई दिक्कत नही हुई।

सबसे पहले मालिक ही मुझसे मुख़ातिब हुआ—मि० सिंह, अजीब बात है, आप मेरे इतने निकट के व्यक्ति थे और आप पर मैनेजमेंट का इतना भरोसा था। लेकिन हमारे पुराने खैरख्वाह होने के बावजूद आप हड़ताल मे शामिल हुए और मात्र शामिल ही नहीं हुए, आपने दूसरों को हड़ताल करने के लिए उकसाया भी। क्या आप बता सकते है कि आपने ऐसा क्यो किया ?

जी, मैंने मालिक से नजरें मिलाते हुए कहा—बता सकता हूं, मगर बस इतना ही कि हड़ताल में शामिल होना मेरी नियति थी, क्योंकि मेरे जैसे दूसरे लोग हड़ताल पर थे। वैसे मैं इस आरोप से इन्कार करूंगा कि मैंने किसी को हड़ताल करने के लिए उकसाया है, यह गलत बात है।

खैर, आप अपनी बर्खास्तगी के संबंध मे कुछ जानना चाहेंगे ?

जी नहीं, उसके लिए हमारी यूनियन आपसे बातें करने वाली है।

आपके मामा की प्रार्थना पर बोर्ड आफ डाइरेक्टर्स आपको दुबारा नौकरी देने के लिए सोच रहा है लेकिन उसके पहले आपको यह लिखकर देना होगा कि आगे से आप कभी भी हड़ताल वगैरह में भाग नहीं लेंगे और न ही वैसे किसी भी षड्यंत्र में शामिल होंगे जो कम्पनी के हितों के प्रतिकूल हों।

मैं ऐसा नहीं कर सकता। यह कोई आवश्यक नहीं कि मैं भी अपने मामा की तरह आपकी दलाली करूं। वैसे मैं इस बात से इन्कार जरूर करूंगा कि मैंने आपके या कम्पनी के खिलाफ किसी साजिश में हाथ बंटाया है। इतना कहकर मैंने मामा की ओर देखा, क्रोध से उनका मुंह लाल हो गया था।

मालिक के चेहरे पर अब कुटिल मुस्कान खिंच आई थी। उसने पहले के से अदाज में पूछा—तब फिर आप इसको क्या कहेंगे, जो आप लोग कर रहे हैं?

लड़ाई! अपने अधिकारों की रक्षा के लिए लड़ाई! अपना अस्तित्व बनाये रखने के लिए संघर्ष, साजिश नहीं।

तो क्या आपको विश्वास है कि आपकी लडाई सफल होगी?

सफल होगी क्या, सफल तो हो ही रही है महोदय। हमारी लडाई अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए है, इसलिए हम तो सफल ही होंगे।

यह आपने ठीक कहा कि आपकी लड़ाई अस्तित्व की लड़ाई है, लेकिन आप यह क्यों भूल जाते हैं कि आपको सफलता तभी मिलेगी जब हम आप से सहमत हो जायेंगे। और ऐसी हालत में जब कि आपकी सफलता हमारे अस्तित्व के लिए खतरनाक सिद्ध होने वाली है तब आप हमसे कैसे अपेक्षा करेंगे कि हम आपकी बात मान ही लें?

न मानें, उससे क्या फर्क पड़ता है, मैं उत्तेजित हो गया—हम अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए आपको मिटा देंगे, आप जैसों को मिटा देंगे। समझे! और इतना कहकर उस कमरे से बाहर निकलते समय मैंने देखा कि मालिक का चेहरा सफेद पड़ गया था और दूसरे लोग जिनमें मेरे मामा भी थे, सूखे पत्तों की तरह कांपने लगे थे।

मेरे साथी, शायद दरवाजे से कान लगाये हमारी बातें सुन रहे थे, बाहर निकलते ही मुझे उन्होंने बांहों में भर लिया। फिर त्रिपाठी ने कहा—तुमने बिल्कुल ठीक कहा।

थोड़ी ही देर बाद पुन: हम सभी लोगों को बुलाया गया। इस बार अन्दर जाते समय हमारे चेहरों पर अतिरिक्त दृढ़ता के भाव थे।

क्यों

बात तो वैसे कुछ भी नहीं थी। लेकिन लोगों को तो उसका बतगड़ बनाना था, बना दिया। हुआ यह कि गंगा मोची का बेटा किरपा अपनी उमर के अन्य लड़कों के साथ गांव के बाहर वाले अखाड़े के पास कंचे खेल रहा था। जैसा कि खेल में हुआ करता है, उस दिन किरपा ही जीत भी रहा था। और किरपा का जीतना अततः उसके साथ खेलने वालों के लिए ईर्ष्या का कारण बन गया। इसी डाह और आंतरिक द्वेष के वातावरण में जब किरपा ने जोगिन्दर पंडित के आखिरी कंचे को भी निशाना बना दिया तो पंडित ने उसे उसका जीता हुआ कंचा देने से साफ इन्कार कर दिया। लाख समझाने पर भी जब जोगिन्दर कंचा देने के लिए तैयार नहीं हुआ तो किरपा को लगा कि पंडित उसकी जीत के प्रभाव को एकदम गलत ढंग से समाप्त करने की कोशिश कर रहा है। बस, उसे गुस्सा आ गया और उसने जोगिन्दर पंडित की बांह मरोड़कर उससे जबरन कंचा छीन लिया।

अब यहां अगर ऐसी स्थिति में पंडित की बांह मरोड़कर कंचा छीन लेना किरपा का अपराध था तो उससे भी बड़ा अपराध यह था कि वह मोची का लड़का होकर ब्राह्मणों के साथ खेलने चला आया था। नहीं तो क्या उसकी जात वाले भी, केवल बांह मरोड़कर कंचा छीन लेने के लिए एकदम गोल बांध कर उसे पीटने लगते? लेकिन अब तो उससे गलती हो चुकी। इसलिए पिटना ही था। बेरहमी से पीटा गया। प्रतिरोध की हल्की-सी कोशिश भी की थी, लेकिन जब जोगिन्दर ने अखाड़े में पड़ी एक ईंट उठाकर उसके सिर में दे मारी तो वह चुपचाप पिटता रहने के लिए बिल्कुल विवश हो गया था। सिर फूट जाने के बावजूद उसे तब तक पीटा

जाता रहा था जब तक शहर से कमाकर लौटता किरपा का बापू गंगा वहां नहीं पहुंच गया। गंगा का पहुंचना भी अप्रत्याशित ही था। रोज तो सीधी राह से घर ही चला जाता था। आज न जाने कैसे जी में आया कि अखाड़े के पास वाले पीपल से बकरी के लिए पत्ते तोड़ता चले, और वह इस तरफ चला आया था।

किरपा को खून से लथपथ देख गंगा रोमांचित हो उठा। जब उसे पता चला कि जोगिन्दर पंडित ने किरपा का सिर फोड़ा है तो उसकी आंखों में खून उतर आया, उसने क्रोध से कांपती आवाज में जोगिन्दर से कहा—तुमने तो इसका सिर फोड़ दिया पंडित, इसलिए कि तुम लोग गिनती में अधिक थे, लेकिन अब अगर मैं तुम्हारा सिर फोड़ दूं तो?

गंगा की बातों से ब्राह्मणों के सभी लड़के सहम गये थे और एक-एक करके वहां से खिसक गये थे। और जब तक गंगा अपने घायल बेटे को पीठ पर लादकर घर तक पहुंच पाता, सारे के सारे लड़के अपने घरों में घुस चुके थे।

किरपा की हालत देखकर पास-पड़ोस वाले बहुत मोह खा रहे थे। लेकिन गंगा मोह खाने की अपेक्षा अपने आक्रोश को उन सभी लड़कों के घर वालों के आगे जता आना अधिक अच्छा समझता था, जिनके कारण किरपा की यह हालत हुई थी। वह अभी उलाहना दे आने की बात सोच ही रहा था कि हाथ में एक मोटा-सा लट्ठ लिए कामेश्वर पंडित दरवाजे पर आ धमके और लगे गंगा का नाम ले-लेकर उसकी मां-बहन को गालियां देने।

कामेश्वर पंडित जोगिन्दर के बाप थे। जब जोगिन्दर ने उन्हें यह बताया कि गंगा ने उसे और अन्य लड़कों को सिर फोड़ने की धमकी दी है तो वे आपे से बाहर हो गये और पूरी बात सुनने से पहले ही लट्ठ लेकर गंगा के घर के लिए निकल पड़े। अब कामेश्वर पंडित गालियां दे रहे थे और गंगा बेटे के सिर से बह रहे खून को देखने के बावजूद चकित भाव से उनकी गालियां सुनता जा रहा था।

आखिर गंगा को मुंह खोलना ही पड़ा—आप बेकार ही मुझे गालियां दे रहे हैं पंडितजी। पहले पूरी बात समझ लेते। एक तो आपके सपूत ने

किरपा का सिर फोड दिया और ऊपर से आप झगड़ा करने पर तुल रहे हैं।

गंगा की बात सुनकर कामेश्वर पंडित के दिमाग का पारा और चढ़ गया। भभककर बोले—साले चमार! कहता है झगड़ा करने आया हूं? तू वहां लडकों को सिर फोडने की धमकी दे रहा था सो कुछ नहीं? क्यों? जान से लूंगा साले, कहे देता हूं।

गंगा को आश्चर्य हुआ। क्या कह रहे हैं पंडितजी? सिर फोडने की धमकी दे रहा था? लडकों को? नहीं, बिल्कुल झूठी बात है। उसने तो पूछा भर था कि 'इसमें धमकी कहां है? और अगर गंगा ऐसी धमकी देता भी, धमकी क्या मार भी देता, तो क्या गलत करता? जब सिर्फ धमकी का नाम सुनकर ही पंडित उसके दरवाजे पर लट्ठ भाज रहे हैं तो अपने बेटे का सिर फोडने वालों को वह मार क्यों नहीं सकते थे? उसने पंडित की बात काटने की कोशिश की—नहीं-नहीं पंडितजी, आप गलत कह रहे हैं। मैंने धमकी नहीं दी थी, मैंने तो बस यही कहा था कि'

अरे जाने भी दे। जो हुआ सो हुआ—बूढ़ा जस्सू मोची बात को ज्यादा बढ़ने देख, साधने का प्रयत्न करते हुए बोला—पंडितजी से कोई झगड़ा किया जाता है? ये तो हमारे मालिक हैं। गलती हुई सो हुई। चल, अब माफी मांग ले।

और गंगा ने माफी मांग ली।

और गंगा के माफी मांग लेने के बाद भी कामेश्वर पंडित उसे ऐसी नजरों से देखते हुए गए मानो कह रहे हों कि सामने आना बच्चू, कच्चा नहीं चबा गया तो मैं भी पंडित नहीं।

संतुष्ट तो गंगा भी नहीं था, झगड़े के इस समाधान पर। यह क्या बात हुई कि जो मार खाये वही माफी भी मांगे। उसे जस्सू पर गुस्सा आ रहा था—मालिक से माफी मांग लो। ऊंह। बड़े आये मालिक—। जैसे उन और उसके परिवार को वही खिलाते हों। नहीं, गंगा का कोई मालिक नहीं है। कोई उसे अपने घर से नहीं खिलाता। कोई नहीं‥ कोई भी नहीं! वह तो मेहनत-मजदूरी करके अपना पेट पालता है। और जब कोई उसे खिलाता नहीं तो फिर वह उसका मालिक कैसे हुआ?

फिर भी, झगडे के सुलझाव से क्षुब्ध होते हुए भी गगा ने मान लिया था कि वात अब सुलझ गयी है। लेकिन वात सुलझी नही थी। उसका तो बतगड बनना था, बनी। लेकिन इस बार गगा का तनिक भी दोष नही था। फिर दोष किसका था ?

जिस दिन यह घटना घटी, उसके दूसरे दिन शाम को गंगा शहर से घर लौट रहा था। गाव के बाहर एक चौडा वरसाती नाला है और उसके ऊपर है एक लम्बा-सा पुल। गगा जब पुल के पास पहुचा, उसे वहां कुछ आदमी मिले। चेहरे पर किसी साजिश का भाव लिए और अबूझ नजरों से उसे घूरते, फिर न जाने किस बात पर उनकी गगा से तू-तू मैं-मैं हो गयी। बात बढते भी देर नही लगी, जैसे उसे बढाया ही जाना था। और फिर उन आदमियो ने गगा को बुरी तरह धुन डाला। इधर रात गये तक गगा घर नही लौटा तो घर वालो को फिकर हुई। कुछ बिरादरी वाले लालटेनें ले-लेकर ढूढने निकले और अततः उसे पुल के पास वाले बगीचे से बेहोश हालत मे उठाकर लाया गया।

दस घटे की लबी बेहोशी के बाद, दूसरी सुबह जब गगा की आख खुली थी, तब पता चला कि दोष किसका था। गगा ने बताया कि कामेश्वर पडित के आदमियो ने उसे उसी बात के लिए पीटा था, जिसके लिए उसने माफी माग ली थी।

माफी माग लेने के बाद भी बदले की कार्रवाई! मोचियो का पूरा टोला पंडितो की इस कमीनगी से आदोलित हो उठा। बगल का दुसाध टोला भी उनके साथ हो गया। स्कूलो मे पढ़नेवाले लड़को का तो विचार हुआ कि अभी तुरंत ही कामेश्वर पंडित को पकडकर ठोक दिया जाये। एक आदमी को निहत्था देखकर वार करना? वह भी मिलकर? थू !

लेकिन बिरादरी के बूढ़ों का खयाल बदला लेने के मामले मे कुछ दूसरी तरह का था। उनके विचार से, मामले को अपने हाथों में लेने की बजाय पुलिस के हवाले कर देना ज्यादा अच्छा था, क्योंकि अगर अब फिर मारपीट हो जाती है, और पडित लोग पहले पहुंच जाते हैं तो फिर बडी मुश्किल हो जायेगी, सारे मोची बेकसूर फस जायेंगे। पूरी बिरादरी को जेल मे चक्की पीसनी पडेगी। चोरी का मामला बनाते या कोई भी मामला

बनाते कितनी देर लगती है। कोर्ट-कचहरी के चक्करों का अलग झगड़ा और घरों की यह हालत कि पीछे से कोई दो जून का आसरा कराने वाला भी नहीं। नहीं बाबा, इससे तो अच्छा है हम लोग ही पहले पुलिस में रपट लिखा दें।

नौजवानों को बूढ़ों की यह योजना अच्छी नहीं लगी। उनके ख्याल से पैसों से बिकी पुलिस से न्याय मांगने की बजाय बदला लेकर जेल जाना ज्यादा असरदार, ठोस और सम्मानजनक बात थी।

अंत में बूढ़ों की बात ही मानी गयी। पंडितों के पास पैसों का जोर है तो हम भी बिल्कुल मुरदार नहीं। अगर पैसों से ही उन बदमाशों को जेल भिजवाया जा सकता है तो करो पैसा इकट्ठा, चंदा करो। जो जितना दे सकता हो दे। मामला सिर्फ गंगा का ही नहीं है। आज दब गये तो कल फिर किसी और के साथ यही जुल्म होगा। नहीं! उन लोगों को सजा मिलनी ही चाहिए।

चंदा होने लगा।

लेकिन बात फिर बिगड़ गयी। इस बार झड़प आपस में ही हुई। शौखिन मोची, मोचियों में सबसे ज्यादा धनी है। मोचियों में ही क्यों, पूरे गांव में केसरीसिंह के बाद उसी का नम्बर है पैसे वालों में। कलकत्ते में जूतों की एक बहुत बड़ी दुकान है उसकी। शौखिन खुद पहले अस्पताल में कम्पाउंडरी में था। कम्पाउंडरी में उसने जायज-नाजायज सब तरह से खूब पैसा बनाया। अब उसके बेटे दुकान के जरिये कमा रहे हैं। और अगर सच कहा जाए तो जितना घमंड अपने धन का खुद शौखिन को नहीं उससे कहीं ज्यादा उसकी बिरादरी वालों को है। और आज, ऐसे समय में तो, जबकि पूरी बिरादरी की इज्जत का सवाल है, उसका घमंड आसमान को छूने लगा था। अगर उस तरफ के अधिकांश लोग धनी थे तो इस तरफ कौन था उनकी टक्कर का? जाहिर है शौखिन।

लेकिन जब बिरादरी वाले चंदा मांगने शौखिन के आंगन में पहुंचे, तो उसने चंदा देने के लिए साफ इन्कार कर दिया, बोला—"मैं नहीं समझता कि महज इतनी-सी बात के लिए आप लोगों को पुलिस के पास दौड़ जाना चाहिए। ऐसी बातें तो आये दिन हुआ करती हैं। और फिर गंगा कोई

राजा-नवाब तो है नही कि जरा-सा पिट गया तो आप लोगो की इज्जत चली गयी ।

शनीचरा मोची को शौखिन का लहजा बहुत बुरा लगा। नाराजगी के से स्वर मे बोला—आप तो हमे यू सलाह दे रहे हैं दादा, जैसे आप हमारी जात के नही, कोई दूसरी जात के हों। एक वो लोग है कि सभी ब्राह्मण-ठाकुर एक हो गये और एक आप हैं कि हमी लोगों को गलत ठहरा रहे हैं।

इतना सुनना था कि शौखिन आग-बबूला हो गया। अपनी भूतपूर्व नीचाई का अहसास उसकी आज तक की सारी मेहनत-मशक्कत, बनाव-चढ़ाव को एक साथ गलत साबित किये दे रहा था। क्या खाक बडा आदमी समझता रहा वह अपने को? यह हरामी तो उसे अब भी वही शौखिन समझते हैं—ब्राह्मणों की जूठी पत्तल उठा कर चाट जाने वाला। भभककर बोला—तो क्या सोचते हो कि मैं भी तुम्ही लुच्चों की जात का हू ? भगो-भगो ! तुम भिखमंगो के साथ कौन रहेगा। चलो, भागो यहां से। बड़े आये जात वाले। बदमाश कही के !

और फिर सब लोग मन-ही-मन दांत पीसते, शौखिन की बात पर हैरान होते, शौखिन को कोसते, उसके पिछले जीवन की टुच्चई को याद करते-कराते लौट आये। बात लग गयी थी। अभी तक पडितो-ठाकुरों ने ही नीचा समझा। अब अपनी जात वाले भी दुत्कार रहे हैं। युवको ने फिर कहा कि चदा मागने वाली बात ही साली गलत है। हम तो पहले ही कहते थे। किसी ने सुनी नही। अब भी क्या बिगड़ा है। जान का और जेल जाने का डर मन से निकाल दो और लगा दो ठिकाने कामेश्वर पंडित के बच्चे को। और उससे भी पहले इस शौखिन को। क्या होगा ? हद-से-हद फांसी ही तो होगी ? मर ही तो जायेंगे ? अब भी क्या जिंदा हैं ?

लेकिन बूढ़ों ने अपनी समझ से फिर बात संभाल ली। पैसे इकट्ठे कर लिए गये और फिर सब लोग थाने गये। रो-कलपकर थानेदार को सारी बात सुनायी और हाथ जोडकर कहा कि हुजूर ! किसी तरह एक बार उस कामेश्वर पंडित को अंदर करवा दिया जाये। बस !

थानेदार ने मोचियों की पूरी बात ध्यान से सुनी। लेकिन बात खत्म

होते ही उठायी अपनी बेंत और उन लोगो को फटकारते हुए गरजा—साले चले हैं मुकदमा करने । ठाकुरो-ब्राह्मणो को बधवाने चले हैं । थानेदार को बेवकूफ समझ रखा है । क्यो ? आज तुम लोगो के कहने से कामेश्वर पडित को गिरफ्तार कर लू और कल को सस्पेंड हो जाऊ ? क्यो ? वे लोग तो सोर्सफुल आदमी हैं । मेरी नौकरी भी जा सकती है । पर तब तुम लोग मेरे बीवी-बच्चो को खिलाओगे क्या ? हरामजादे !...साले ! मुकदमा लड़ेंगे !

और सब लोग वहा से भागकर गाव लौट आये थे । बूढ़ों की योजना ठप्प हो गयी थी, इसलिए वे चुप हो गये थे । अब जो भी करना था वह युवको को करना था और युवक इस बात के लिए कटिबद्ध थे कि मार का बदला मार से लिया जाये ।

और तभी से पूरे गाव में तनाव का वातावरण बना हुआ है । झगड़ा भी गगा मोची और कामेश्वर पडित के बीच का न रहकर नीची और ऊची जात वालो के बीच का हो गया है । अब जहा मोचियो, दुसाधो और अन्य छोटी जात वालो मे इस बात को लेकर खलबली मची हुई है कि अब मोची-दुसाध भी ऊची जात वालो पर हाथ उठायेंगे और ऊची जात वाले चुपचाप सहन कर लेंगे । ये लोग मौका ढूढ रहे हैं और वे लोग आड ।

छोटी जात वालो का दिमाग किस तरह ठंडा किया जाये, यही विचार करने के लिए इस समय गनेशसिह के दालान मे ऊची जातवालो की सभा बैठी । गाव के सभी ऊची जात वाले इकट्ठा हुए हैं ।

बात गनेशसिह शुरू करते हैं । बिल्कुल रंगमचीय गंभीरता से—भाइयो, आप तो जानते ही है कि यहा के छोटी जात वालो का दिमाग कितना चढ गया है । गाव मे अभी कुछ दिनों से घटती आ रही सारी घटनाए आप लोगो को मालूम है । मैं उनके बारे मे कुछ भी नही कहूगा । कहना तो यही है कि हमारे होते हुए छोटी जात वाले साप की तरह सिर उठाये घूम रहे हैं । अब आवश्यकता है इनके उठे सिरो को कुचल देने की । क्यों, क्या विचार है आप लोगो का ?

सभी लोग सहमत है गनेशसिह की बात से । गनेशसिह यहा तक सहमति प्राप्त करने के बाद आगे कहते है—इसलिए मेरा विचार है कि अ— लोग एकजुट होकर उनके विरुद्ध लड़ें । हमे विचार करना चाहिए

कि शूद्रों को क्या सजा दी जाये जो अपनी औकात, अपना धर्म भूल गये हैं, उनके साथ क्या व्यवहार किया जाये ?

गनेश सिंह की बात पर सभी सोचने लगे हैं। पूरी तरह विचार-मग्न होकर सभी लोग कोई ऐसी बात सोचना चाह रहे हैं जिससे छोटी जात वालों की हिम्मत सदा के लिए टूट जाये। इसी बीच दालान के पश्चिमोत्तर कोने से किसी की आवाज उभरती है—उन लोगों के घरों में आग लगा देनी चाहिए।

वाह-वाह ! कितना सुन्दर विचार है ! सब साले जलकर राख हो जायेंगे। कौन है यह बात सुझाने वाला ? सभी मुग्ध भाव से उस कोने की ओर देखते हैं और देखकर सबकी आखें आश्चर्य से फैल जाती हैं। अरे ! यह तो शौखिन मोची है। यहा कैसे आ गया ?

दूसरे लोगों की सोच से कुछ अलग किस्म की सोच है सुमेरसिंह की। वह प्रत्येक बात पर गहराई से सोचता है। ऊंची जात वालों की इस सभा में शौखिन मोची क्यों आया ? वह अपनी जगह पर खड़ा होकर पूछता है—शौखिन मोची यहा क्यों आया है ?

सुमेर का प्रश्न सबकी आखों में तैरने लगा है। क्यों आया है शौखिन मोची ऊंची जात वालों की इस सभा में ? पूछता है कटु स्वर में केदार पडित—क्यों ? किसने बुलाया शौखिन मोची को ?

बलदेवसिंह हैरान है। बिसेसर पांडे को कुछ समझ में नहीं आ रहा। आखिर सुमेर और केदार को ही शौखिन का यहा आना क्यों खटक रहा है ? हम लोग धनी हैं। इन लोगों में श्रेष्ठ हैं, हमें तो कुछ बुरा ही नहीं लग रहा और इन भिखमंगों को रट लग गयी है कि शौखिन यहा क्यों आया ? शौखिन के यहां कर्ज लेने जाते हैं तब उसका मोची होना नहीं खटकता। लेकिन कौन समझाये सालों को ! जडबुद्धि !

आखिर गनेशसिंह बात संभालने का प्रयत्न करते हैं—छोड़ो, इस बात से लेना-देना क्या है। शौखिन यहा क्यों आया, इसको भूलकर उसके सुझाव पर ध्यान दो। यह सोचो कि आग कब और कैसे लगायी जाये। बेमतलब की बातों में क्यों उलझते हो ?

लेकिन सुमेर और केदार को अपने प्रश्न का उत्तर चाहिए—नहीं

आग लगाने की बात पीछे होगी। पहले हमें यह बताया जाय कि शौखिन यहां क्यों आया ?

और हार कर मनेशसिंह अपने मन की बात उगल देते हैं—देखो भाई, छोटी या बड़ी जात में जन्म लेने भर से कोई आदमी छोटा या बड़ा थोड़े होता है। बड़ा कहलाने के लिए आदमी को कुछ चीजों की आवश्यकता होती है—जैसे पैसा, रहन-सहन, बात-व्यवहार, बुद्धि-विचार। और सबको पता है कि शौखिन इन सब बातों में हमारी ही तरह है बल्कि हमसे बढ़कर है। फिर यह छोटी जात का कैसे हुआ ?

झटका-सा महसूस करता है सुमेरसिंह। तो आदमी की जात अब पैसे से छोटी या बड़ी होने लगी ? वह बौखलाकर कहता है—अगर ऊंचा होने के लिए ये सब गुण आवश्यक है, तब मैं आपकी जात का कैसे हुआ ? मेरे पास तो पैसा नहीं है। मैं तो आपके खेतों में मजदूरी करके अपना पेट पालता हूं। मेरे विचार भी आप लोगों जैसे नहीं हैं और न ही मेरा रहन-सहन आप लोगों जैसा है। शादी-ब्याह में मैं आप लोगों के साथ बैठकर खा नहीं सकता। इसलिए कि मेरे कपड़े आप लोगों की तरह साफ-सुथरे नहीं होते। फिर मैं कैसे हुआ आपकी जात का आदमी ?

दालान में सन्नाटा छा गया। किसी को नहीं सूझ रहा था कि कैसे समझाया जाये सुमेर और केदार को ? और अब तो सुमेर और केदार ही नहीं, उनकी तरह के बहुत-से लोग यही सवाल पूछ रहे हैं—बताओ, हम बड़ी जात के कैसे हुए ?

बड़ी उलझनपूर्ण स्थिति हो गयी है मनेशसिंह के लिए। क्या कहें ? लेकिन चुप रहना भी ठीक नहीं। कहते हैं—तुम लोग तो हमारे भाई हो !

तड़पकर कहता है केदार—भाई ! हम तुम्हारे भाई हैं ! दस रुपये भी बिना हैण्ड-नोट लिखवाये दिये हैं कभी ? जिस तरह छोटी जात वालों से सूद लेते हो, उसी तरह हम से भी लेते हो। फिर हम तुम्हारे भाई कैसे हुए ? जब पैसे वाला होने के कारण शौखिन मोची बड़ा आदमी है तो फिर मुझमें और गंगा मोची में फर्क कहां है ? मैं भी गरीब हूं, वह भी गरीब है। मैं समझ गया। सुमेर रे ! चल यहां से। यह जात की लड़ाई यह पैसे वालों और गरीबों की लड़ाई है !

गनेशसिंह की समझ में नहीं आता कि बात को आगे बिगड़ने से कैसे बचाया जाय। अंततः याचनापूर्ण स्वर में कहते हैं—तुम लोग जाओ मत भाई।

सुमेर चीखती हुई आवाज में कहता है—क्यों नहीं जायें? हम लोग गरीब हैं, गरीबों के साथ रहेंगे। तुम लोग हमारे जैसों के घरों में आग लगाओ और हम तुम्हारे साथ रहें। क्यों?

सभा में उपस्थित सुमेर और केदार जैसे तमाम लोगों को लगता है—यह 'क्यों' उनके होठों के बीच भी छटपटा रहा है। वे पहल की इंतजार में हैं। सुमेर और केदार के बाहर निकलते ही वे भी इस सभा से उठ जायेंगे।

चक्रव्यूह टूटेगा

अजीब स्थिति हो गयी थी दीपा की उस दिन। घर में कदम रखते ही उसने अजीबो-गरीब हरकतें शुरू कर दी थी। कभी इस कमरे में तो कभी उस कमरे मे, कभी छत पर तो कभी ड्राइंग रूप म। और फिर जैसे सब कुछ से निबट कर मेरे पास आ बैठती और शुरू कर देती वही बात, जिसे वह यहा आने के बाद से ही दुहराये जा रही थी—पापा कह रहे थे कि तुम्हे विनय से शादी करके कोई सुख नही मिलेगा। रहने के लिए ठिकाने का घर तो है ही नही। इस बार पापा मिलेंगे तो कहूगी कि देख लो पापा, मैं कितने सुन्दर घर में, कितने सुख-चैन से रहती हू।

मेरे लिए दीपा की बातो को सुनते जाने के सिवाय दूसरा कोई चारा नही था। मैं उसे उसकी आन्तरिक भावनाओ को व्यक्त करने से क्योंकर रोक सकता था। वह भी वैसे मे जब वह मेरे ही विचारो को, मेरी ही सोच को व्यक्त कर रही थी।

दीपा तब की बातें याद कर रही थी, जब पहली बार हमारी शादी की बात चली थी। तब दीपा के पिता ने कुछ खास सवालो को उठाते हुए इस रिश्ते का विरोध किया था। उनका कहना था कि लड़के का होनहार होना, उसका एम. ए. का छात्र होना ही तो पर्याप्त नही है। बाप पूरी जिन्दगी पुलिस की नौकरी में रहकर भी अच्छा सा एक मकान नही बनवा सका, पुश्तैनी जमीन-जायदाद में कोई वृद्धि नही कर पाया। महज दस-बारह बीघे जमीन और चार-चार भाई, ऊपर से तीन बहने। क्या सुख-चैन मिलेगा ऐसे घर मे दीपा को ? हा, अगर लड़का नौकरी-पेशा होता, तब कोई बात नही थी।

दीपा ने जब मुझे अपने पिता के विचारो से अवगत कराया था तब मुझे उनकी इस सोच पर काफी क्षोभ हुआ था। मैंने उसी दिन दीपा से कहा कि अगर वह सचमुच मेरे साथ शादी करना चाहती है तो चुपचाप सिविल मैरिज कर ले। बेकार के इन परम्परागत पचडो मे फसने की मेरी कोई इच्छा नही है। लेकिन तब दीपा को इतना साहस नही हुआ था और हमारे सम्बन्ध स्थायी होते-होते रह गये थे।

लेकिन कुछ ही दिनों के बाद बात फिर जोर पकड गई थी, मेरे बाबूजी के चलते। वैसे मैंने उन्हें इस सब कुछ की बाबत कुछ नही बताया था, फिर भी वे जान गये थे। शायद छोटे भाई ने उन्हें इस सम्बन्ध में बताया हो। पूरी बात जानने के बाद बाबूजी खुद को अपराधी महसूस करने लगे थे, शायद अम्मा ने भी उन्हे बुरा-भला कहा था। खैर जो भी हो, एक दिन उन्होंने मुझसे कहा—विनय बेटा, तू कही नौकरी कर ले। मकान बनवाने और जमीन-जायदाद खरीदने की तो मेरी अब सामर्थ्य है नही, इसीलिए मैं चाहता हूँ कि तू कही नौकरी कर ले।

मैंने बाबूजी के कथन का प्रतिवाद किया—झूठी मान-प्रतिष्ठा के लिए मुझसे यह सब नही होगा। और फिर नौकरी ही कौन जेब मे पडी है कि जब जी मे आया, ढूढ ली और पा गये।

उसकी चिंता तू मत कर। बाबूजी ने कहा था। फिर उन्होने मुझ से पुलिस सब इंसपेक्टर के लिए होने वाली प्रतियोगिता परीक्षा का फार्म भरवा दिया था। कुछ दिन के बाद परीक्षा हुई और मै शारीरिक जाच तथा लिखित परीक्षाओं में चुन लिया गया। मजिल तक पहुचने के क्रम में आने वाली आखिरी बाधाओं से निपटने का काम बाबूजी ने स्वय किया। इस क्रम मे उन्होने विभागीय अधिकारियो से अपनी पुरानी जान-पहचान का फायदा उठाया और आखिर मुझे पुलिस सब-इंस्पेक्टर की वर्दी पहनाने मे सफलता हासिल कर ली।

मेरी नियुक्ति को लेकर दोस्तों ने मेरी काफी खिल्ली उड़ाई—तुम तो कहते थे, पुलिस मात्र दमन करने की मशीन है। आज वही विभाग तुम्हारे लिए इतना अच्छा कैसे हो गया?

प्रत्युत्तर मे मे मेरी दलील होती कि कोई भी विभाग अच्छा या बुरा

नही होता। अच्छे-बुरे उसमें काम करने वाले लोग होते हैं। अगर वहां सही लोग हों, जनता का हित-अहित समझने वाले लोग हों तो उनसे जनता का भला ही होगा। मैं भी जनता के हित मे ही काम करूंगा, दबे और उपेक्षित लोगों के हित मे।

बाद में मैं ट्रेनिंग के लिए चला गया था। उन्ही दिनो दीपा से मेरी शादी हो गयी थी। और जबकि मेरी पोस्टिंग सहायक थाना-प्रभारी के रूप मे पहली बार यहा हुई थी, दीपा भी यहा आ गई थी।

सोचने का क्रम दीपा ने तोड़ दिया। एम दम सिर पर आ खड़ी हुई—यू समाधिस्थ होकर क्या सोचने लगे बाबा ! कहे देती हूं, बहुत जल्द बूढ़े हो जाओगे। चलो खाना खा लो। मुझे नीद आ रही है। ट्रेन मे इतनी दूर का सफर, मैं सचमुच थक गई हू भई। चलो भी बाबा'''।

और मैं खाने के लिए उठ गया।

उस दिन शाम को मैं काफी देर मे लौटा। दरअसल सुबह ही शहर से लगभग आठ-दस मील दूर एक गाव मे डकैती की सूचना मिली थी। मामले की जाच के लिए मुझे ही जाना पड़ा। वहां आवश्यक जाच-पड़ताल, घर के लोगो तथा दूसरे गवाहो के बयान आदि लेने मे काफी समय निकल गया था, इसीलिए वापस लौटने मे शाम हो गई थी।

दीपा नाश्ता रखकर चाय लाने चली गई। हाथ-मुँह धोकर मैं नाश्ता करने लगा। इसी बीच चाय के साथ ही दीपा एक लिफाफा थमाते हुए बोली—किन्ही वसुधा बाबू का निमन्त्रण कार्ड है। उनकी कोई नई दूकान खुल रही है आज। इसी के उपलक्ष्य मे यह आयोजन किया गया है।

वसुधा बाबू यहां के सबसे ज्यादा धनी लोगो मे से एक थे। यहा उनकी बाल्टी और बक्से बनाने की फैक्टरिया थी। कई-कई ट्रक भी चलते थे। मोटर पार्ट्स की नई दूकान भी आज खुल रही थी। यह सब कुछ मैंने दीपा को वसुधा बाबू के बारे में जानकारी देते हुए बताया और फिर कहा—तुम भी चल रही हो न ?

नहीं, मेरा कहीं जाने को मन नही कर रहा। तुम अकेले ही चले जाओ।

मुझे याद आया कि मैंने आज दीपा को फिल्म दिखाने का वादा किया था, शायद वह इसीलिए उखड़ गई भी। मैंने उसे छेड़ते हुए कहा—चलो भी, फिल्म कल देख लेना।

दीपा हल्के मे मुस्करायी, मानो उसकी चोरी पकड़ी गई हो। फिर तैयार होने लगी।

वसुधा बाबू के यहा से लौटने के बाद से मानो दीपा को बोलने की बीमारी हो गयी थी। वसुधा बाबू की शान-शौकत, उनकी तडक-भडक भरी जिन्दगी, बस वह इसी एक विषय पर लगातार बोले जा रही थी—"बाप रे! वसुधा बाबू की औरतों ने कितने गहने पहन रखे थे! कितनी सुन्दर और कीमती साडिया पहनी हुई थी उन लोगो ने, तुमने तो देखा ही नहीं, तुम अन्दर जाते तब देखते। बप्पा रे। घर-भर मे कारपेट बिछी हुई थी और उस पर गद्देदार पलग। बिल्कुल राजसी ठाठ-बाट समझो। एक हमारा घर है। बहुत हुआ तो नेवार की खाट या फिर लकड़ी का सस्ता सा पलग! कुछ भी तो नही है वसुधाबाबू की तुलना मे। सच कहती हू, मुझे तो वहा अपनी साडी और गहनो का खयाल कर शर्म सी महसूस होने लगी थी।

मुझे झुझलाहट हो आयी। एक ही बात को बार-बार दुहराना और वह भी दूसरों की सम्पन्नता के साथ अपनी स्थिति की तुलना। मैंने थोडे तल्ख स्वर मे कहा—"सब कुछ समझते हुए भी इस तरह की बातें करना कहां की बुद्धिमानी है। यह तो पहली ही नजर मे समझा जा सकता है कि वसुधा बाबू क्या हैं, उनकी हैसियत क्या है और अपनी तो खैर जानते ही हैं! इससे हम वसुधा बाबू थोडे ही हो जायेंगे?"

"सो तो खैर नही ही होगे। फिर भी...जाने दो।" तभी शायद दीपा को कुछ याद आया, उसने अपने बैग से एक साडी निकाली और मुझे देती बोली—देखो तो कैसी है? वसुधा बाबू की पत्नी ने मुझे दी है।

मैंने साडी को उलट-पलट कर देखा। फिर ठंडे स्वर मे कहा—अच्छी है। बहुत अच्छी, वसुधा बाबू के यहां की चीज भी भला अच्छी नही होगी।

इस बार दीपा के झुझलाने की बारी थी—"बहुत बुरा लगता है मुझे यह तुम्हारा लहजा। वैसे भी तुम्हारा इस तरह असतुष्ट होना मेरी समझ मे नही आ रहा है। ऐसा ही था तब फिर वहा मुझे किस लिए ले गये थे ? मैं कोई अपनी इच्छा से तो गई नही थी ? अजीब बात है ! देखकर भी किसी की सम्पन्नता को अदेखा कर दो तो अच्छा, नही तो तुम्हारी दृष्टि मे बुरे हो गये। अजीब दृष्टिकोण है भई।"

मुझे तनाव बढ़ने की आशका मे दबना पड़ा—"नही, यह बात नही है। दरअसल तुम्हें यह साडी नही लेनी चाहिए थी।"

"तो इसमें कौन सी बडी बात है? कभी समय आयेगा तो मैं उन्हें लौटा दूगी।"

"हा, यही ठीक रहेगा। तुम समझती नही, किसी सरकारी कर्मचारी से बिना अपने स्वार्थ के कोई निकटता स्थापित नही करता। और फिर इससे हमारी स्थिति कमजोर होती है, हमे गलत काम करने पड़ते हैं। होती होगी खराब स्थिति। तुम्हारी दृष्टि मे तो हर तरह के सम्बन्ध स्वार्थ से प्रेरित ही होते हैं। बस इसमे तुम्हारा कोई दोष नही है। तुम्हे तो मौका ही नही मिला, वरना अगर तुमने वसुधा बाबू की पत्नी का स्नेह-पूर्ण व्यवहार देखा होता न, तब तुम ऐसी बात ही नही करते।

मैं हल्के हँसा, तुम्हे भी यहा रहते अगर तीन महीने हो गये होते तब तुम भी इस तरह की बातें नही करती। खैर छोड़ो…और बात खत्म हो गई।

कई बार आमन्त्रित करने के बाद उस दिन वसुधा बाबू अपनी पत्नी के साथ हमारे घर आये थे। काफी देर तक यूही घर-परिवार की बातें होती रही थी। इसी क्रम मे मैंने उनसे अपने छोटे भाई की बेरोजगारी की चर्चा की थी। तुरन्त ही उन्होंने उसे अपनी बाल्टी फैक्टरी मे कोई अच्छी-सी नौकरी देने का आश्वासन दिया था। आखिर मे जब वे लोग लौटने लगे तो दीपा ने उसकी पत्नी को एक अच्छी साडी और दूसरे कपडे दिये थे। पहले तो उन लोगों ने बहुत मना किया फिर यह कहते हुए कि शायद उस दिन वाली साडी ही बदल कर लौटायी जा रही है, उन्होने साडी और

कपड़े ले लिए थे। हमने उन्हें आश्वस्त किया कि ये कपड़े उनके प्रति हमारे स्नेह और आदर के प्रतीक हैं, न कि उस दिन वाली साड़ी का बदला। वैसे वास्तविकता यही थी कि हम उनकी दी हुई साडी को ही बदल कर लौटा रहे थे। न जाने क्यो, जब से उनकी दी हुई साडी हमारे घर मे आई, हम वसुधा बाबू के वैभव का कुछ अतिरिक्त-सा रौब अपने मन-मस्तिष्क पर महसूस कर रहे थे—विशेष करके मैं।

लेकिन जाते-जाते वसुधा बाबू एक ऐसी बात कह गये थे, जिसने दीपा को बहुत क्षुब्ध कर दिया था—अगर आप लोग यह सब अपने स्नेह के रूप मे हमे दे रहे हैं तब तो ठीक है, वरना हम अपनी दी हुई चीज का बदला नही लेते। ऐसी-ऐसी साड़ियां तो हम आये-दिन लोगो को दिया करते है।

और शायद दीपा ने उनकी बात की प्रतिक्रिया में उनके जाने के बाद कहा था—ऊंह, बडे आये बडप्पन दिखाने वाले। बडे होगे तो अपने घर के होंगे। हम भला क्यो लें किसी का अहसान अपने सिर पर।

उस दिन के बाद से दीपा मे उल्लेखनीय परिवर्तन आया था। वसुधा बाबू और उनके घर मे सम्बन्धित बातें करना उसने बन्द कर दिया था। वसुधा बाबू के यहा से कई बार बुलावा आने के बावजूद वह उनके यहा जाने का नाम नही लेती थी। मैंने एक बार जोर भी दिया जाने के लिए, किन्तु उसने यह कहकर मुझे चुप करा दिया कि दोस्ती बराबर की हैसियत वालो मे हुआ करती है। हमारे बीच मे तो असमानता की काफी लम्बी-चौडी खाई है।

दीपा मे आये इस बदलाव से मुझे संतोष ही हुआ था। मुझे लगा कि अब वह वास्तविकताओं के धरातल पर जिन्दगी की बुनियाद खडी करने का प्रयत्न करने लगी है।

इन दिनों घर के एकाकीपन से बचने के लिए दीपा ने स्थानीय महिला सास्कृतिक परिषद् की सदस्यता ले ली थी। वह रोज ग्यारह से तीन बजे तक का समय परिषद् द्वारा संचालित संगीत, सिलाई तथा दस्तकारी की कक्षाओ मे गुजारती। उसे संगीत का वैसे भी काफी शौक था और वह काफी अच्छा गा लेती थी। सिलाई का काम भी वह अच्छा जानती थी। फिर भी क्योंकि दूसरी औरतो के साथ उसका समय कट जाता था, इस-

लिए वह परिषद् में नियमित रूप से जाया करती थी।

उस दिन शाम को जब मैं घर आया तो नाश्ते के दौरान चलने वाली इधर-उधर की बातों के दौरान ही दीपा ने पूछा—वसुधा बाबू से इधर तुम्हारी खट-पट चल रही है क्या ?

नहीं तो ! खट-पट क्यों होगी, भला ? मैंने आश्चर्य ही पूछा ! ऐसी कोई खास बात नहीं हुई हमारे बीच।

कुछ तो हुई होगी, वरना हमारे स्कूल में इतनी चर्चा क्यों होती। लगभग सभी औरतें कह रही थीं कि वसुधा बाबू सब-इंस्पेक्टर विनय से गुस्साये हुए हैं। हर किसी से कह रहे हैं कि ऐसा घमंडी और बदमिजाज सब-इंस्पेक्टर अब से पहले कोई नहीं आया था। भले आदमियों की इज्जत करना तो जैसे जानता ही नहीं। आखिर बात क्या है ?

मुझे गुस्सा आ गया, वसुधा बाबू पर। इतनी छोटी-सी बात को इस तरह हवा दे रहे हैं। उनकी साजिशों में हाथ बटाऊ तो अच्छा आदमी, वरना असभ्य और घमंडी। मैंने प्रकट में दीपा से कहा—बात क्या होगी, जिसको ज्यादा धन और मान हो जाता है न, वह अपने सिवा किसी को कुछ समझता नहीं।

कुछ बताओ भी तो ! दीपा ने आग्रह-सा किया।

और मैं उसे चार या पांच दिन पहले की उस घटना के बारे में बताने लगा, जब वसुधा बाबू अपने कुछ रुपये चोरी होने के सिलसिले में थाने में रिपोर्ट दर्ज कराने आये थे। रिपोर्ट के अनुसार पिछले दिन वसुधा बाबू के कार्यालय से दो हजार रुपये चोरी हो गये थे। रुपये उनकी मेज की दराज में रखे हुए थे। वसुधा बाबू ने यह तो नहीं कहा कि उन्होंने रुपया लेते हुए किसी को देखा है, परन्तु उन्होंने तीन व्यक्तियों के ऊपर अपना शक जाहिर किया। उन्हीं के अनुसार—रुपया निकालते हुए तो मैंने किसी को नहीं देखा परन्तु मुझे विश्वास है कि रुपया घनीराम, महेश और चन्द्रिका ने ही निकाला है।

वसुधा बाबू तो रिपोर्ट लिखा कर चले गये, अब यह मेरी ड्यूटी थी कि मैं उनकी रिपोर्ट के आधार पर तहकीकात करूं—सबसे पहले मैं घनीराम के घर पहुंचा। तब शाम के छ:-साढ़े छ: बज रहे थे। घनीराम कुछ

ही समय पहले ड्यूटी से लौटा था। मुझे देख कर एकबारगी कुछ असयत सा दिखने लगा। जब मैंने इसका कारण पूछा तो उसने मासूम स्वर मे कहा कि उसकी पत्नी की तबीयत बहुत ज्यादा खराब है। उसे पिछले हफ्ते टाइफाइड हो गया था। धनीराम उसी के लिए दवा लाने जा रहा था।

धनीराम की बातें सुनकर मुझे उसकी स्थिति से सहानुभूति-सी हो आयी। परन्तु यहा मैंने व्यावहारिक होना ही ज्यादा उचित समझा। मैंने उसे वसुधा बाबू की रिपोर्ट की बाबत बताया और उससे पूछा कि उसे इस सम्बन्ध मे क्या कहना है।

उत्तर मे धनीराम एक फीकी-सी हँसी हँसा—मुझे क्या कहना है साब! वसुधा बाबू अगर मुझे जेल भिजवाना चाहते हैं तो फिर मुझे जाना ही होगा। वे हर तरह से प्रभावशाली आदमी हैं। जहां तक रुपये चुराने का सवाल है, तो मैं इससे इन्कार करता हू। मैं मजदूर आदमी हूं, मेहनत-मजदूरी करके अपना और अपने परिवार का पेट पालता हूं। वैसे मैं जानता हू कि मामले की असलियत क्या है, परन्तु उसे बताने से कोई फायदा तो है नही। खैर, आप यह बताइये कि आप मुझे गिरफ्तार ही करेंगे या नहीं जमानत पर छोड़ देंगे?

मैंने किंचित् आश्चर्य से पूछा—क्यों, तुमने यह कैसे समझ लिया कि मैं तुम्हें जेल ही भेजूंगा? मैं तो मामले की तहकीकात करने आया हूं।

धनीराम मेरी बात से थोडा लज्जित-सा दीखने लगा। बोला—साब, दरअसल बात यह है कि वसुधा बाबू जो चाहते हैं, कर-करा लेते है। यह सब कुछ तो मात्र-दिखावे के लिए होता है।

तब मैंने धनीराम को विश्वास दिलाया कि मैं सचमुच ही तहकीकात कर रहा हू, वसुधा बाबू के रौब मे आकर महज खाना-पूरी नही कर रहा हू। उसके बाद उसने पूरी बात बतायी। उसने बताया कि पिछले दिनो वसुधा बाबू की फैक्टरी मे मजदूरों ने एक हड़ताल की थी। हड़ताल भीषण महंगाई के दौर में कम वेतन मिलने से होने वाली दिक्कतो के कारण आयोजित की गई थी। दूसरे शब्दों में हड़ताल वेतन-वृद्धि की मांग पर जोर डालने के उद्देश्य से आयोजित की गई थी। तब धनीराम, महेश और चन्द्रिका ने हड़तालियों का नेतृत्व किया था। उसी समय से ये लोग वसुधा

बाबू की आंखों में खटक रहे थे। इसके पहले भी बसुधा बाबू कई कर्मचारियों को काम से हटाने का प्रयास कर चुके थे, परन्तु इस काम में वे मजदूरों की एकता के कारण सफल नहीं हो पाये। वैसे पिछले दिनों जब धनीराम अपनी पत्नी की अस्वस्थता के कारण वसुधा बाबू से अग्रिम रकम मांगने गया था, तब भी उनके साथ उसकी कुछ चख-चख हो गई थी क्योंकि उन्होंने कुछ भी देने से साफ इन्कार कर दिया था। आखिर में धनीराम ने यह भी कहा कि वसुधा बाबू ने रुपये चोरी होने की रिपोर्ट मात्र उन लोगों को अपनी राह से हटाने के लिए दर्ज कराई है।

मुझे लगा कि धनीराम की बातों में सचाई का पुट है। फिर भी मैंने जांच-कार्य को आगे बढ़ाया और महेश तथा चन्द्रिका से पूछताछ की। फैक्टरी के कुछ अन्य कर्मचारियों से भी जानकारी हासिल की। मेरी इस व्यापक जांच-पड़ताल का यही निष्कर्ष निकला कि वसुधा बाबू ने अपने विरोधियों को फसाने के उद्देश्य से ही यह झूठी रिपोर्ट दर्ज कराई थी। अन्तिम स्थिति तक पहुंचने के बाद मैंने वसुधा बाबू को बुलाकर उन्हें सारी बातों से अवगत करा देने का निर्णय किया।

मेरे बुलाने पर वसुधा बाबू पुलिस-स्टेशन आये थे। जब मैंने अपनी जांच-प्रक्रिया और उसके नतीजों की जानकारी दी तो वे बौखला-से गये।

बोले—आप भी अजीब आदमी हैं! मैंने आपसे जांच करने के लिए कब कहा था? आपको तो खुद ही समझ जाना चाहिए था कि मैं उन लोगों को कैसे ही अन्दर देखना चाहता हूं।

लेकिन मैं यह भला कैसे कर सकता था?

कर क्यों नहीं सकते थे साहब, कर सकते थे। खैर! गलती मेरी ही है लेकिन गलती भी क्या है, मैंने तो समझा था कि आप मेरी दोस्ती का खयाल करके ही यह छोटा-सा काम कर देंगे। खैर, छोड़िये यह दोस्ती का चक्कर। अब यह बताइये कि इन लोगों और इन्हीं जैसे कुछ अन्य लोगों को जेल भेजने का आप क्या लेंगे?

जी! मैं वसुधा बाबू को इस नये रूप में देख कर हैरान हुआ जा रहा था।

हां-हां, उन्होंने तीखी नजरों से मुझे देखते हुए, मुस्कराते हुए कहा—

क्या लेंगे आप—अच्छा-सा रेडियो सैट, टेलिविजन, गोदरेज की आलमारी या नकद ही दस-पांच हजार?

वसुधा बाबू! मैंने कड़े प्रतिवाद के स्वर में कहा।

लेकिन वसुधा बाबू को मेरे प्रतिवाद की परवाह नहीं थी। वे अपनी ही धुन में कहे जा रहे थे—अरे साहब, मैं आपको बीस-पच्चीस हजार भी दे सकता हूं।

और अब मेरे लिए अपने गुस्से को जब्त कर पाना कठिन हो गया। कुर्सी से उठते हुए मैंने शान्त किन्तु कठोर स्वर में कहा—आपसे मेरे निकट सम्बन्ध रहे हैं वसुधा बाबू, इसीलिए सीधी तरह यहां से चले जाइये, वरना मैं कुछ कर बैठूंगा।

तब सचमुच वसुधा बाबू नमस्कार करके चले गये थे—बिल्कुल उत्तेजनारहित होकर। तब मैंने सोचा था कि वे बात समझ गये हैं। लेकिन मुझे क्या पता था कि वे मुझे भी अपनी राह का रोड़ा समझ बैठे हैं और मेरे खिलाफ...

लेकिन दीपा ने मेरी बात पूरी नहीं होने दी। बोली—छोड़ो भी, मैं समझ गई। कैसे-कैसे लोग हैं इस दुनिया में! किसी को ईमानदारी और चैन से जीने नहीं देते। चलो, मैं जान तो गई, अब कल से सभी को वसुधा बाबू की असलियत से वाकिफ कराऊंगी।

इससे क्या होगा, मैं स्वयं ही वसुधा बाबू से इस सम्बन्ध में बातें करूंगा। मैंने कहा और बाहर जाने के लिए उठ खड़ा हुआ।

वसुधा बाबू की फैक्टरी में पहुंच कर मैंने उनकी उपस्थिति के सम्बन्ध में पूछा। पता चला कि वे अपने कार्यालय में बैठे फाइलें देख रहे हैं। मैं सीधा वहीं चला गया। वसुधा बाबू ने मुझसे हाथ मिलाया और फिर सामने की कुर्सी पर बैठने का इशारा करते हुए बोले—कैसे आना हुआ विनय बाबू। खैर, पहले यह बताइये कि ठंडा पीयेंगे या गरम?

मेरा मन अन्दर से गुस्साया हुआ था, फिर भी मैंने शांत-सहज लहजे में कहा—जी, धन्यवाद। अभी घर से नाश्ता करके चला हूं। और जहां तक आने के उद्देश्य का सवाल है, वह तो आप जानते ही हैं।

नहीं तो, बिना आपके बताये मैं भला कैसे जान सकता हूं ? वसुधा बाबू अपने चेहरे पर विस्मय के भाव खींच लाये थे। शायद जबरन।

और अब मैंने उनसे सब-कुछ साफ-साफ कह देना ही उचित समझा। सब-कुछ सामान्य ढंग से कहकर मैंने आगे कहा—वसुधा बाबू, हमारे आप के सम्बन्ध काफी अच्छे रहे हैं और मैं चाहता हूं कि हम आगे भी अच्छे मित्रों की तरह ही रहें। लेकिन अगर आप इसी तरह मुझे दुश्मन समझ कर आगे भी यही सब करते रहे तो फिर विवश होकर मुझे भी कुछ करना पड़ेगा।

मेरी बात सुन कर वसुधा बाबू के चेहरे पर कुटिल हास्य की लकीरें उभरीं—अच्छा, ऐसी बात है ! तब फिर लगे-हाथ यह भी बता दीजिये इंस्पेक्टर साहब कि आप मेरा क्या कर लेंगे ?

अब मेरे लिए अपना गुस्सा रोक पाना कठिन हो गया—मैं इस समय आपसे पुलिस ऑफीसर के रूप में बातें नहीं कर रहा हूं, वसुधा बाबू। अपनी इज्जत पर सरेआम डाका डालने वाले आदमी के समक्ष मैं एक साधारण आदमी बोल रहा हूं—विनय, जो अपनी जरूरतों के कारण पुलिस की नौकरी करता है, जो···

लेकिन वसुधा बाबू ने पूर्ववत् मुस्कराते हुए मेरी बात काट दी—छोड़िये यह सब, आप यही बताइये कि आप मेरा क्या कर लेंगे ?

इस बार मैं फट पड़ा—मैं···मैं···आपके विरुद्ध सरकार में रिपोर्ट करूंगा कि आप मजदूरों को झूठे मुकदमों में फंसाने के लिए मुझे रिश्वत दे रहे थे। लिहाजा जब इसमें सफल नहीं हुए तो मेरे चरित्र पर कीचड़ उछाल रहे हैं और··

वसुधा बाबू ने मेरी बात इस बार भी काट दी—आप सरकार में मेरे खिलाफ रिपोर्ट करेंगे ? लेकिन इतना जान लीजिए कि आप मेरा कुछ बिगाड़ नहीं सकेंगे। सरकार में आपसे ज्यादा मेरी पहुंच है। स्थानीय विधायकों में चुनाव लड़ाने के लिए चन्दा देता हूं और विधायक महोदय की आपके विभागीय मन्त्री से काफी अच्छी घनिष्ठता है। इसी तरह और ऊपर की सीढ़ियां भी चढ़ते जाइये—चढ़ते-चढ़ते आप पायेंगे कि अब और ऊपर चढ़ना आपके बस की बात नहीं, जबकि मेरे लिए कोई दिक्कत नहीं

होगी। समझे !

अब मेरे लिए कुछ कहना शेष नही था, अतः मैं उठ खड़ा हुआ। लेकिन चलते-चलते मैंने कह देना जरूरी समझा—सच्चाई के आगे आपके पैसो की, आपकी पहुंच की कोई कीमत नही रहेगी वसुधा बाबू। इसलिए जो सोच रहे है, भूल जाइये।

लेकिन वसुधा बाबू ने मेरी बात नही सुनी। वे जोरों से हँसने लगे।

वसुधा बाबू के यहा की बातों से मूड काफी उखड़-सा गया था। फिर भी पहले के कुछ काम निपटाने के उद्देश्य से मैं पुलिस-स्टेशन चला आया। गेट पर ही मुझे थाने का मुशी मिला, जिसने मुझे बधाई देते हुए यह 'खुश-खबरी' सुनाई कि वर्तमान थाना-प्रभारी श्याम बाबू की बदली हो गयी है और मुझे प्रोन्नत करके यहा का थाना-प्रभारी बनाया गया है।

प्रोन्नति की खबर से मुझे काफी खुशी हुई, साथ ही पर्याप्त सन्तोष का भी अनुभव हुआ इतनी जल्दी मेरी प्रोन्नति मेरी समझ से अपने काम के प्रति मेरी निष्ठा का ही परिणाम थी।

दो-तीन दिन बाद श्याम बाबू चले गये। उनके जाने के बाद से मेरी व्यस्तता काफी बढ गई थी। ठाकुर साहब भी अब मेरी मेज के निकट ही बैठा करते थे। वे निकट के एक गाव के भूतपूर्व जमीदार थे। बरसों पहले जब मेरे बाबूजी इस थाने पद-स्थापित थे तब ठाकुर साहब से उनकी काफी मित्रता थी—ऐसा ठाकुर साहब अक्सर कहा करते थे और मेरे बाबूजी से मित्रता के चलते ही मुझे कुछ अतिरिक्त स्नेह दिया करते थे।

बातों-ही-बातों मे एक दिन ठाकुर साहब ने मुझसे कहा—श्याम बाबू कोई अच्छे आदमी नही थे।

मैंने उनके कथन का प्रतिवाद किया—लेकिन जब तक वे यहा रहे, तब तक तो आप उन्ही के गीत गाते रहे।

उससे क्या होता है ! सही बात यही है कि श्याम बाबू बहुत अच्छे आदमी नही थे।

मुझे उनकी बात पर हँसी आ गई। बोला—शायद मेरे जाने के बाद आप मेरे बारे मे भी ऐसा ही कहेंगे।

काफी खुलकर हँसे ठाकुर साहब मेरी बात पर। फिर गम्भीर होकर बोले—धत् ! तुम्हारे बारे में भला ऐसा क्यों कहूंगा। तुम तो मेरे बेटे के समान हो।

ठाकुर साहब इस इलाके की एक बड़ी हस्ती थे—आजादी के पहले भी और उसके बाद भी। पहले रैयतों से लगान की वसूली करते थे। दूसरे धंधे भी थे, लेकिन जब जमींदारी छिन गई तो अपनी जमीन खुद-काश्त करवाने लगे। ट्रैक्टर खरीद लिया था, सिंचाई के साधनों की कमी नहीं थी। इसके साथ ही ठाकुर साहब क्षेत्रीय सहकारिता आन्दोलन की अग्रिम पंक्ति के नेताओं में से थे। इसलिए नियम से शहर आया करते थे।

एक दिन ठाकुर साहब आये तो काफी गम्भीर थे। मेरे निकट की कुर्सी खींचते हुए बोले—आज एम० एल० ए० साहब मिले थे। तुम्हारे बारे में पूछ रहे थे कि कैसा अफसर है, जो तहजीब ही नहीं जानता। मैंने उन्हें समझा दिया कि तुम अपने ही लड़के हो। फिर कुछ तैश में आकर ठाकुर साहब ने कहा—यह साला वसुधा मारवाड़ी अपने आपको समझता क्या है ? साले को गलतफहमी हो गई है कि एम० एल० ए० साहब बिना उसकी मदद के जीत ही नहीं सकते। साले को जैसे पता ही नहीं है कि अगर डंडे के जोर से बोगस वोट नहीं गिरवाऊं तो एम० एल० ए० साहब की जमानत जब्त हो जाए। खैर, न समझे वसुधा मारवाड़ी इस बात को, एम० एल० ए० साहब तो अच्छी तरह समझते हैं। तभी तो उन्होंने कहा कि थाना-प्रभारी के खिलाफ वसुधा बाबू के गुस्से को वे कुछ भी महत्त्व नहीं देते और थाना-प्रभारी पर किसी तरह की इन्क्वायरी नहीं होगी।

मैंने किंचित् उपेक्षा से कहा—भला यह सब कहने की आपको क्या जरूरत थी ! होने देते इन्क्वायरी। अच्छा ही होता। सच्चाई खुद-ब-खुद प्रकट हो जाती। यही तो मैं चाहता [illegible]। मैंने तो खुद रिपोर्ट की है वसुधा बाबू के खिलाफ।

ठाकुर साहब ने काफी आत्मीय स्वर में कहा—कुछ भी हो, तुम्हारे खिलाफ इन्क्वायरी खड़ी हो, यह बात मुझे अच्छी नहीं लग रही थी।

इन्क्वायरी ! वह भी तुम्हारे जैसे आदमी के खिलाफ, जो किसी को दबाता नहीं, किसी को सताता नहीं, नाजायज पैसे नहीं लेता। कम-से-कम मेरे जैसा आदमी तो हर्गिज नहीं चाहेगा कि एक ऐसा अफसर इन्क्वायरी की चपेट में आये जो गरीब मजदूरों के लिए करोड़पतियों से लड़ने को तैयार हो। दरअसल हमारे देश को तुम्हारे-जैसे लोगों की ही जरूरत है।

फिर ठाकुर साहब कुछ देर के बाद अपना ट्रैक्टर दनदनाते हुए चले गये थे।

उस दिन के बाद से ठाकुर साहब जब भी मेरे पास आते, उनकी जबान से वसुधा बाबू के लिए धाराप्रवाह गालियां निकलती रहतीं—"साला ब्लैक मार्केटियर, पैसे वाला बनता है, मजदूरों को झूठे मुकदमों में फंसाता है। उनको भूखों मारने की साजिश करता है और बनता है पहुंच वाला। कहो तो एक दिन में साले की लुटिया डुबो दूं विनय बेटा।"

और मैं उन्हें टालने की गरज से कहता—"अब छोड़िए भी इस पुरानी बात को ठाकुर साहब।"

"अरे, तुम छोड़ने को कहते हो। उधर वह साला सेठ तुम्हें यहां से भगाने पर तुला हुआ है। चारों तरफ पैरवी करता फिर रहा है। वह तो कहो कि मैं उसकी राह में दीवार बन कर खड़ा हो गया हूं वरना वह तो कब का तुम्हें यहां से भिजवा चुका होता।

लेकिन मैं यह मानने के लिए तैयार नहीं था कि वसुधा बाबू अपने उद्देश्य में महज ठाकुर साहब के चलते सफल नहीं हो पा रहे हैं। मुझे पूरा विश्वास था कि सरकार को मेरी ईमानदारी और कर्तव्य-निष्ठा पर पूरा भरोसा है, तभी तो इतनी जल्दी प्रोन्नत करके मुझे थाना-प्रभारी बनाया गया।

लेकिन अचानक उस घटना ने मेरी तमाम समझ के आगे एक प्रश्न-चिह्न सा खड़ा कर दिया। मुझे सपने में भी ठाकुर साहब की ओर से वैसे व्यवहार की उम्मीद नहीं थी। हर घड़ी मुझे 'बेटा' कहकर सम्बोधित करने वाले ठाकुर साहब मुझे और मेरे सहयोगियों को गोली से उड़ाने

पर आमादा हो जायेंगे, इसकी भला उम्मीद भी कैसे की जा सकती थी।

दर-असल मुझे आज से चार-पांच दिन पहले कुछ घायलों के बयान लेने अस्पताल जाना पड़ा था। ये लोग लगभग अधमरे रूप में अस्पताल में दाखिल कराये गये थे। मुझे इन घायलों में थोड़ी दिलचस्पी इसलिए हुई क्योंकि वे सब लोग ठाकुर साहब के गांव के ही रहने वाले थे। उन्होंने जो बयान दर्ज कराये थे, उनके अनुसार, उनकी इस स्थिति के लिए पूरी तरह से जिम्मेदार ठाकुर साहब ही थे।

घायलों ने पूरी घटना का विस्तार से वर्णन करते हुए बताया कि पिछले दिनों जब सरकार की ओर से बासगीत जमीन के पर्चे बांटे जा रहे थे, तब इन लोगों ने भी, जिस जमीन पर वे लोग रहते थे, उसे अपने नाम करा लेने की सोची। असल में वह जमीन ठाकुर साहब की ही थी। जिस पर कई पुश्त पहले ठाकुर साहब के पूर्वजों ने इन लोगों को बसाया था। अब, जब ठाकुर साहब को यह पता चला कि उस जमीन पर रहने वाले लोग अपने हिस्से की जमीन का पर्चा अपने नाम से लेने जा रहे हैं, तो उन्होंने उस जमीन पर रहने वालों को वहां से हट जाने के लिए कहा। लेकिन जिस जमीन पर ये लोग वर्षों से रहते आ रहे थे, उसे वैसी स्थिति में क्यों छोड़ देते जब वह कानूनन् उनकी होने जा रही थी। जब ये लोग जमीन छोड़ने के लिए तैयार नहीं हुए तो ठाकुर साहब की ओर से उन्हें बल-प्रयोग के द्वारा निकालने की चेष्टा की गई। इसी क्रम में जब इन लोगों ने प्रतिरोध किया तो इन्हें मारा-पीटा गया।

मैंने उन लोगों के बयानात के आधार पर ठाकुर साहब के खिलाफ एक मुकदमा दर्ज किया। डॉक्टर की रिपोर्ट के अनुसार घायल व्यक्तियों को जान से मार डालने की कोशिश की गई थी। अब इन परिस्थितियों में पुलिस के जिम्मे जो पहला काम था, वह था ठाकुर साहब और उनके आदमियों को गिरफ्तार करना।

मैं अपने एक सहयोगी पुलिस अफसर तथा कुछ सिपाहियों के साथ ठाकुर साहब के यहां पहुंचा। उन्होंने हमारी काफी आवभगत की। फिर जब मैंने अपने आने का कारण बताया तो उन्होंने लापरवाही से अपने कंधे उचकाये और कहा—ठीक है, तुम इन्क्वायरी रिपोर्ट में लिख दो कि घायल आदमियों

ने मेरा घर लूटने की चेष्टा की थी और मेरी प्रतिरोधात्मक कार्रवाइयों के फलस्वरूप ही उन्हें चोटें आयी। जाओ, यह सब लिखकर झटपट किस्सा खत्म करो।

लेकिन मैंने अनावश्यक संकोच के साथ यह बताया कि ऐसा करना मेरे लिए संभव नहीं है, क्योंकि वस्तुस्थिति ठाकुर साहब को दोषी करार दे रही है।

फिर तो ठाकुर साहब बिगड़ गये—तो सचमुच तुम मुझे गिरफ्तार करने के इरादे से ही आये हो क्या?

मैंने कहा—जी हां, इसके अलावा दूसरा कोई उपाय नहीं है।

और वे गुस्से से चीख पड़े—नमकहराम, मैं तो समझता था कि तुम खानदानी हो, लेकिन तुम तो निहायत कमीने आदमी हो। तुम्हारे कारण मैंने वसुधा बाबू जैसे आदमी से दुश्मनी मोल ली, तुम्हारे पक्ष मे सरकार के यहा पैरवी पहुंचायी और तुम मुझे ही गिरफ्तार करने आये हो! बेशर्म कहीं के!

मेरे लिए अब ठाकुर साहब की बुजुर्गियत के लिहाज और औपचारिक शालीनता के दायरे से बाहर आना आवश्यक हो गया। मैंने अपने स्वर को अपेक्षाकृत दृढ किया और बोला—ठाकुर साहब, मैं यहां आपको गिरफ्तार करने आया हू, आपकी गालियां सुनने नहीं। आप सीधी तरह से हमारे साथ चलिए, वरना···।

आगे मैं अपनी बात पूरी कर पाता, इसके पहले ही वे गरज उठे—वरना तुम क्या कर लोगे? तुम्हारे जैसे दो कौड़ी के आदमी मेरे दरवाजे पर इतना बोल गये, यही काफी है। भले आदमी की तरह यहां से चले जाओ, नहीं तो एक-एक को गोलियों से भुनवा दूगा।

ठाकुर साहब के स्वर से, उनके तमतमा आये चेहरे से मुझे लगा कि ठाकुर साहब हमे कोरी धमकी ही नहीं दे रहे हैं। इसी बीच चेहरों पर खूंखार भाव लिए दूसरे बहुत से लोग भी वहां आ गये थे, जो निश्चित रूप मे ठाकुर साहब के आदमी थे।

ऐसी स्थिति में ठाकुर साहब को गिरफ्तार करना काफी जोखिम का काम था। मन-ही-मन वहा से लौट चलने का निर्णय करके मैंने ठाकुर

साहब ने कहा—ठीक है, आप नही चलते तो न सही ठाकुर साहब, लेकिन आगे की सोच लीजिए। यह सब आप अपने अहित मे ही कर रहे हैं। मैं यहा से जाकर आपकी कारगुजारी की रिपोर्ट करूगा। और क्योंकि आपने कानून को चुनौती दी है, इसलिए यकीन मानिये, आप बच नही सकते। आप···

मेरी बात इस बार पुन काटी गई। इस बार मेरी बात काटी ठाकुर साहब के ठहाको ने। फिर बोले—अब जाओ भी। खैरियत मनाओ और यहा से चलते बनो! रही कानून को चुनौती देने की बात तो सरकार हम बनाते हैं, सरकार हमारे दम से चलती है। हम वसुधा मारवाडी नही हैं, जो तुम्हारी धौंस मे आ जायेंगे। हमने इस देश पर सदियो तक शासन किया है। समझे?

ठाकुर साहब की बातो मे मेरे लिए समझने को क्या रखा था। मैं अपने सहयोगियो के साथ लौट आया।

पुलिस-स्टेशन लौटकर मैंने इस घटना की रिपोर्ट अपने उच्चाधिकारियों को वायरलैस से भिजवा दी। मुझे विश्वास था कि शीघ्र ही कोई-न कोई उच्चाधिकारी वहा से स्थिति से निपटने के लिए आयेगा और तब ठाकुर साहब की सब शेखी निकल जायगी।

दो दिनो के बाद भी जिला मुख्यालय से कोई नही आया, अलबत्ता उस रोज दोपहर मे वायरलैस पर एक सूचना अवश्य रिसीव की गई। उसके अनुसार मेरा स्थानातरण हो गया था। मुझे विशेष रूप से यह आदेश दिया गया था कि मैं अगले चौबीस घटो के अन्दर जिला मुख्यालय मे अपनी उपस्थिति की रिपोर्ट करू।

इस समाचार से मैं सकते मे आ गया। विस्तृत जानकारी के लिए मैंने उसी समय आरक्षी अधीक्षक महोदय के कार्यालय से टेलीफोन के द्वारा सम्पर्क किया। वहा से मुझे बताया गया कि मेरा स्थानातरण 'जनता के विशेष अनुरोध पर' किया गया है।

अजीब सी मन स्थिति मे मैं घर आया। लग रहा था, जैसे एक सही लडाई मे मुझे गलत ढंग से पराजित कर दिया गया है। दीपा ने मेरी

परेशानी को लक्षित किया । जब उसने मुझसे मेरी परेशानी का कारण पूछा तो मैंने पूरी बात बता दी ।

मेरी बात सुनकर दीपा ने कहा—लेकिन इसमे परेशान होने की तो कोई बात नही है । तुम्हें नौकरी ही तो करनी है न ? यहां करो चाहे किसी दूसरी जगह ।

लेकिन दीपा की इस प्रतिक्रिया से मेरी परेशानी कम नही हुई । बोला—सो तो ठीक है । लेकिन आखिर मुझे नौकरी तो कानून की करनी है न ? अब तुम्ही बताओ, ऐसी स्थिति मे मैं कानून की नौकरी कैसे कर सकता हू ? चाह कर भी नही कर सकता । कुछ विशेष लोगों के हित में कानून का उपयोग होने दू, तब तो ठीक है, वरना मुझे जनता का कोप-भाजन बनना पड़ जायगा ।

दीपा कुछ देर तक सोचती रही । फिर बोली—तुम बहुत भावुक हो रहे हो । सीधी बात यह कि तुम अपना पेट पालने के लिए नौकरी कर रहे हो । इसे छोड़ना तुम्हारे वश की बात नहीं । ज्यादा-से-ज्यादा तुम यही कर सकते हो कि अपनी जानकारी में कमजोर लोगो पर जुल्म नही होने दो । जुल्म होने पर उनकी मदद करो । और यह काम तुम कहीं रहकर भी कर सकते हो । एक न एक दिन ये लोग भी तो जायेंगे । आखिर तुम अपने को इतना कमजोर क्यों समझते हो ?

दीपा की बात अपनी जगह पर ठीक थी, परन्तु न जाने क्यों, मुझे संतोष नही था ।

अगली सुबह मैं और दीपा स्टेशन की ओर जा रहे थे । तय यह हुआ था कि जिला मुख्यालय जाकर मैं सप्ताह भर की छुट्टी ले लूगा और फिर यहा लौटकर दीपा को गाव छोड़ आऊगा । इसी क्रम में मैं आज जिला मुख्यालय जा रहा था ।

मुख्य बाजार से गुजरते समय हमारा रिक्शा रुक गया क्योंकि एक जुलूस सामने से आ रहा था । निकट आने पर मैंने देखा कि जुलूस मे वही लोग शामिल थे, जिनके सम्बन्धी ठाकुर साहब के आदमियों के द्वारा घायल होकर अस्पताल में पड़े थे । वे लोग प्रखंड विकास कार्यालय के

आगे अपनी इस माग पर जोर डालने के लिए प्रदर्शन करने जा रहे थे कि उन्हे उनकी जमीन पर कब्जा दिलवाया जाय और उन पर जुल्म करने वालो को सजा दी जाय।

अचानक मैंने देखा कि इस जुलूस मे दूसरे बहुत से लोगों के अलावा धनीराम और उनके साथी भी शामिल हैं। मैंने यह बात धीरे से दीपा को बताई तो उसका चेहरा खिल उठा। उसने मेरी ओर देखा और कहा —मैंने कहा था न !

करिश्मा

भैरोलाल आज बहुत परेशान थे। उनकी समझ मे नही आ रहा था कि मंत्रीजी के आने पर उन्हें क्या जवाब देंगे। कैसे उन्हे बतायेगे कि पूरे इलाके के लोग उनका नाम तक नही सुनना चाहते। कोई भी गाव ऐसा नही था जहां से मत्री जी अपने चुनाव-दौरे का आरम्भ कर सके। सभी लोग उनसे खार खाये हुए थे। सभी के मुह पर एक ही बात थी कि इस चुनाव मे मंत्रीजी को इलाके मे घुसने तक नही दिया जायेगा।

भैरोलाल इस समस्या से मत्रीजी को काफी पहले अवगत करा चुके थे। लगभग छः महीने पहले ही। लेकिन हंस कर टाल गये थे—अरे छोडो भी, गुरुजी, अभी से चुनाव की चिंता कौन करे। जब समय आयेगा, देखा जायेगा। वैसे कौन हम पहली बार चुनाव लडने जा रहे है! जब से देश आजाद हुआ है, लडते ही आ रहे है। हर बार तो स्थिति ऐसी ही रहती है। हर बार चुनाव के पहले लोग मुझे गालियां देते है। हर गाव मे मुझे काले झडे दिखाये जाते हैं। हर गाव मे मेरे पुतले जलाये जाते है लेकिन तुम साक्षी होकर हर बार के, बता सकते हो कि कोई भी चुनाव मैं पाच हजार से कम वोटों से जीता होऊं? नही। चुनाव के पहले लोग गालियां भले ही दे लें, वोट हर बार मुझे ही देते है। इस बार भी ऐसा हो होगा। नाहक तुम परेशान होते हो।

और तब मंत्रीजी के साथ-साथ भैरोलाल भी निश्चिंत हो गये थे। लेकिन परेशानी उन्हे परसों से हो रही थी। उस दिन शाम को मंत्री जी सचिवालय से लौटे थे। बातों ही बातों मे उन्होने भैरोलाल से कहा था—गुरुजी, चुनाव तो अब काफी करीब आ गया दीखता है। अपने इलाके पर

भी ध्यान देना होगा। आप ऐसा कीजिए कि आज ही उधर चले जाइये। मैं कलक्टर को फोन कर देता हू। वहा जिला मुख्यालय के सर्किट हाउस मे आपके ठहरने की व्यवस्था हो जायगी। रात भर आराम से सोइयेगा फिर सुबह होते ही हिन्दुस्तान टाकीज के मालिक को फोन करके उनकी गाड़ी मगवा लीजिएगा। उसके बाद अपने ढग से पूरे इलाके का दौरा करके अपने खास लोगों को परसों दस बजे सर्किट हाउस मे बुला लीजिएगा। मैं करीब बारह बजे आ जाऊगा। भैंरोलाल मत्रीजी के निर्देशानुसार उसी दिन यहा आ गये थे अपने ढग से सारा काम भी वे कर चुके थे। कल पूरा दिन उन्होंने गाव-गाव घूमकर लोगों से मिलने-जुलने मे बिताया था, सबको मत्रीजी के आने की सूचना दी थी। मत्रीजी की स्थिति के बारे मे थोड़ी पूछताछ की और फिर उन्हे निश्चित समय पर सर्किट हाउस पहुचने के लिए बार-बार हिदायत देकर थके-हारे शाम को यहा लौटे थे।

और आज सुबह आठ बजे से ही मत्रीजी के खास लोग आते जा रहे थे, हर आने वाले से भैंरोलाल तपाक से मिलते। फिर बताते, मंत्रीजी बस थोड़ी ही देर मे आने वाले हैं और फिर एक कोने मे ले जाकर धीरे मे गाव मे मंत्रीजी की स्थिति के बारे मे पूछते। लेकिन हर बार उन्हे निराश होना पड़ता। सभी लोग घुमा-फिरा कर एक ही बात करते—"हम तो मत्रीजी के अपने आदमी हैं गुरुजी, इसलिए हम तो उनके साथ रहेंगे ही, लेकिन जहां तक गाव की बात है, स्थिति ठीक नही है।"

अब तक लगभग बीसों आदमियों से वे बात कर चुके थे और अब वे बिलकुल पक से गये थे। उन्होंने नये आने वालो मे दिलचस्पी लेनी छोड़ दी थी। लोग आते जा रहे थे और उन्हे नमस्कार करके एक-दूसरे से बातें करने मे लग जाते थे। हर आने वाले को सर्किट हाउस का चपरासी चाय का कुल्हड़ थमा देता था, सारा इतजाम भैंरोलाल ने पहले ही कर दिया था।

अभी-अभी बेलापुर के बाबू साहब आये थे सीधे उन्हीं के पास आ खड़े हुए थे। भैंरोलाल उन्हें देख कर कुर्सी छोड़कर उठ गये—आइये ठाकुर साहब, कहिए, क्या हाल है?

हाल वही है गुरुजी। ठाकुर साहब ने कहा—हम लोग तो अपने

आदमी ठहरे कहां जायेंगे, लेकिन जहा तक गाव का सवाल है...

छोडिये भी, भैंरोलाल ने ऊबे हुए अन्दाज मे कहा—आप ठीक है, यही बहुत है, लीजिए चाय पीजिए। उन्होंने चपरासी से कुल्हड लेकर ठाकुर साहब की ओर बढा दिया। फिर चपरासी से बोले, जरा एक मेरे लिए भी देना।

तभी वहा उपस्थित लोगो मे थोड़ी हलचल-सी दिखाई पडी। लोग तेजी से सर्किट हाउस के मुख्य द्वार की ओर बढे जा रहे थे। वहा पहले से खडे पुलिस के जवान सावधान की मुद्रा मे आ गये थे, सामने सडक पर एक गाडी नजर आ रही थी, गाडी के आगे झडा लहरा रहा था और पीछे-पीछे पुलिस की जीप आ रही थी।

इसका मतलब कि मत्रीजी समय से कुछ पहले ही आ गए थे।

मत्रीजी की कार सीधे सर्किट हाउस के पोर्टिको मे आकर रुकी। गाडी के रुकने के साथ ही वे बाहर निकल आये थे। उपस्थित सभी लोगो को उन्होंने हाथ जोड-जोड कर नमस्कार किया और फिर लोगो की भीड मे घुस गये। थोडी देर तक वे सभी लोगो से अपना निजी परिचय दर्शाते हुए उनके परिवार की कुशल-क्षेम पूछते रहे, फिर सर्किट हाउस के बरामदे की सीढिया चढते हुए उन्होंने कहा—आप लोग बीच वाले बडे कमरे मे बैठे, मैं थोडी देर मे आ रहा हू।

और बरामदे मे खुलने वाले एक विशेष कमरे की ओर बढ गये थे। लोग धीरे-धीरे बड़े कमरे मे बैठने लगे थे। तभी चपरासी भैंरोलाल के पास आया था—'साहब आपको बुला रहे है।

साहब नही भी बुलाते, तब भी भैंरोलाल उनके पास जाते ही। सवेरे से जो कुछ उनको परेशान किये हुए था, जल्दी से उसे मंत्रीजी को बताकर वे खुद मुक्त होना चाहते थे।

कमरे मे उनके घुसते ही मत्रीजी ने कहा—मान गया गुरुजी। क्या बढिया काम किया है आपने। ऐसा तो मैंने सोचा भी नही था। लगता है, सब कुछ टीक-ठाक है।

खाक ठीक है, भैंरोलाल ने मन ही मन कहा और एक कुर्सी खीच कर बैठ गये। फिर जल्दी-जल्दी उन्होंने पिछले दो दिनो की रिपोर्ट मंत्रीजी को

दी। अपनी बात समाप्त करते-करते उनके स्वर में निराशा का भाव आ गया था।

उनकी आशा के अनुरूप मंत्रीजी के चेहरे पर क्षण-भर के लिए चिन्ता के भाव आये। लेकिन बस क्षण-भर के लिए ही, उसके बाद तो ठहाकों से कमरा गूंज उठा। जी भर हंस लेने के बाद वे उठकर खड़े हो गये—आप भी खूब है गुरुजी। इतनी सी बात से घबड़ा जाते है। अरे भाई यह चुनाव पानीपत की लड़ाई से कम थोड़े ही है। सब कुछ अगर ठीक ही रहे तो चुनाव लड़ने मे मजा क्या रहेगा, खाक? आप चिन्ता मत कीजिए। सब ठीक हो जायगा। यही क्या कम है कि हमारे जो अपने आदमी है, वे हमारे साथ है। आप बड़े कमरे मे चलिये। मैं भी चल रहा हू।

और भैरोलाल फिर परेशान हो उठे थे।

तो इसका मतलब है कि इलाके के लोग मुझ से काफी नाराज है, क्यों ठाकुर साहिब? लोगों की बाते सुनने के बाद मंत्रीजी अपनी बात शुरू कर रहे थे—ठीक है, मैं मानता हू अपने इलाके के लिए मैंने काफी कुछ नही किया। नई सड़के नही बनवायी, हर गाव मे बिजली न पहुची, पुरानी सड़कों की मरम्मत नही हुई, स्कूल नही खुले और इलाके के बेरोजगार नौजवानो को नौकरिया नही दिलवाई जा सकी। यह सब मैंने नही किया। ठीक है, ये आम शिकायतें है। आप सभी लोगो ने ये बाते दुहरायी हैं, लेकिन क्या इसके लिए मैं ही अकेला जिम्मेदार हू? क्या सारा दोष मेरा ही है?

सभी लोग चुप रहे। मंत्रीजी ने कहा—जिम्मेवार आप लोग भी है आधी जिम्मेदारी तो आप ही लोगों की है। आप मे से कितने लोग इन कामों के लिए मेरे पास आए है? आप मे से कितने लोगों ने इन सब बातों की जानकारी मुझे दी है?

हम समझते थे, आपको इन सभी बातो की जानकारी थी। एक कोने से आवाज आयी।

बेशक थी। मैं मानता हू इस बात को। लेकिन आप भूल जाते हैं कि इस युग मे कोई भी काम जनता की इच्छा से होता है, उसके प्रयत्नों से होता है, उसके ओर से होता है। और इसके लिए सरकारी अधिकारियो

के आगे प्रदर्शन किए जाते है, उनका घिराव किया जाता है। मतलब यह कि कोई भी काम आज के युग मे जनता की सक्रियता के बगैर नही होता। आप लोगों मे से कितने लोगो ने ये काम किए है?

इस बार कोई आवाज नही उठी, सभी लोग चुप थे, मानो वे अपना अपराध स्वीकार कर रहे है। मंत्रीजी ने अपनी बात आगे बढ़ायी—जाहिर है आप लोग खुद भी अपना फर्ज नहीं निभा सके। अब ऐसी स्थिति मे आप लोग मुझ अकेले से कैसे यह उम्मीद करते है कि सारे काम मैं करवा दूंगा। आप लोग सार्वजनिक हित के कामो के लिए कभी मेरे पास आए ही नही, फिर तो कुछ भी होने से रहा। दूसरी ओर अपने व्यक्तिगत कामो के लिए कौन मेरे पास गया और उसका काम नही हुआ?

सभी लोग पुनः खामोश रहे।

सभी काम मैंने किए हैं! ठाकुर साहब मेरे पास रायफल के लाइसेंस के लिए गए थे। मैंने दिलवाया कि नही?

जी, ठाकुर साहब ने कहा।

उपाध्याय जी, अपने गांव मे चकबन्दी के दौरान आप मेरे पास अपने हिस्से का चक सरकारी ट्यूबवैल के पास करवाने के लिए गए थे। मैंने आपका वह काम करवाया कि नही?

.. ..

चौधरी जी, आपके बेटे को मुअत्तिल कर दिया था। उस समय मैंने आपकी पैरवी की थी कि नही?

की थी सरकार। झूठ कैसे कहूं। चौधरी ने कहा।

इसी तरह जब श्रीवास्तवजी का बेटा प्रांतीय लोक-सेवा आयोग की लिखित परीक्षा में चुना गया था, उस समय उसके इंटरव्यू मे मैंने मदद की थी या नही?

जरूर की थी हुजूर, मै कब नही कहता हू। श्रीवास्तवजी ने कहा।

नही करने की बात ही नही। मैंने हर किसी का काम किया है। महतो जी के दामाद को डकैती के मामले मे दस वर्षों की सजा हुई थी। मैंने उसकी पैरवी की। साहूजी राशन तेल पर कंट्रोल के दिनों मे थोक-विक्रेता बनना चाहते थे, बन गए। लीलारामजी कब से बेकार घूम रहे थे, आज वे

जिला पार्टी के महामंत्री है। क्या यह सब झूठ है?

इस बार देर तक चुप्पी छायी रही। अन्त में साहूजी उठे—आपने हमारे लिए हमेशा किया है सरकार। आपके उपकारों को हम नहीं भूल सकते।

बस आप लोग ठीक है, यही बहुत है। जहा तक जनता का सवाल है, उसकी चिन्ता आप लोग मत कीजिए, उसे हम खुश कर लेंगे। हा तो किस गाव में हमारी स्थिति सबसे ज्यादा खराब है?

कोई कुछ न बोला। सभी एक-दूसरे की ओर देखने लगे।

बारी-बारी से बोलिये आप लोग। हां तो ठाकुर साहब, आपके गाव में भी हमारी स्थिति ठीक नहीं है। ठीक है। कल सुबह हम लोग आपके गाव में चलेंगे। आपका गाव काफी बड़ा है, इसलिए हमें वहा अधिक ध्यान देना है। आप जाने से पहले जरा मुझ से मिल लीजियेगा, कहकर मत्रीजी उठ खड़े हुए।

दूसरे दिन आठ बजते-बजते मत्रीजी के दौरे आरम्भ हो गये। शहर से बड़े-बड़े लोगों की गाडिया आ गयी थी। पुलिस की एक बड़ी गाड़ी भी थी। उसमें सशस्त्र पुलिस वाले बैठे थे। दूसरी गाडियां मत्रीजी के अपने आदमियों से भर गयी थी।

ठाकुर साहब तो आये ही नहीं? चलते समय भैरोलाल ने पूछा।

वहां इन्तजाम में लगे होंगे, आप इतने परेशान क्यों हो रहे है गुरुजी, मत्रीजी ने झिड़कने के से अन्दाज में कहा—सब ठीक हो जायेगा।

नहीं, मैं भला परेशान क्यों होऊगा। भैरोलाल ने झेंपते हुए कहा।

और फिर मत्रीजी का कारवां निकल पड़ा। आगे-आगे मत्रीजी की गाड़ी थी। उसके बाद अपने लोगों से भरी पाच गाडियां और सबके पीछे पुलिस की गाड़ी।

ठाकुर साहब का गांव शहर से ज्यादा दूर नहीं था। मुश्किल से पाच मील की दूरी होगी। इतनी दूर गाडियों के लिए तो कुछ ज्यादा नहीं होती, लेकिन उस गांव में जाने वाली सड़क की हालत काफी खराब थी। जगह-जगह गड्ढे पड़ गये थे वैसे भी काफी धूल थी। रास्ता ऐसा था कि

उस पर गाडिया तो क्या, रिक्शे और साइकिल भी ठीक से नही जा सकते, लेकिन मत्रीजी को तो गाव मे जाना ही था। इसलिए गाडियां जैसे-तैसे बढ़ी जा रही थी।

आखिर मे काफिला ठाकुर साहब के गाव के बाहर रुक गया। खुद नही रुका, बल्कि सैकडों लोगो की भीड के द्वारा रोक दिया गया। वहा सडक के किनारे पेडो के बीच ईंटो का बना एक बड़ा-सा चबूतरा था। वही ये लोग शायद काफी देर से बैठे हुए थे। मत्रीजी की गाडी रुकते ही भीड उस पर टूट पडी। एकाध पत्थर भी फेंके गये। मंत्रीजी के नाम के साथ 'मुर्दाबाद' जोडते हुए रह-रह कर नारेबाजी भी होने लगी थी।

भीड़ का इरादा शायद मंत्रीजी को पीटने का भी था, लेकिन वे लोग अपने इरादे मे सफल नही हो पाये। पुलिस वाले राइफलो के साथ वहा आ गये थे और भीड़ को हटाने लगे थे। लेकिन भीड बहुत ज्यादा उत्तेजित थी। उसे काबू मे आते कुछ समय लगा। इसी बीच पुलिस वालों ने कुछ लोगो को पकड लिया था, बाकी लोग थोडी दूर हटकर 'मुर्दाबाद' के नारे लगाने लगे थे।

भैरोलाल की हालत खराब हो गयी। उन्हे मत्रीजी पर काफी गुस्सा आ रहा था। बड़े चालू बनते है। कितनी बार समझाया था कि उस गाव मे पहले जाने की जरूरत नही है। स्थिति एकदम खराब है। लेकिन मुझको तो मूर्ख समझते हैं न! अब समझे। मुझसे इस मामले मे फिलहाल कुछ भी पूछेंगे तो साफ कह दूगा, मैं कुछ नही जानता। बडा भरोसा था ठाकुर साहब का, अब देखें न ठाकुर साहब को। अपने बाल-बच्चो समेत भीड़ मे शामिल होकर मुर्दाबाद के नारे लगा रहे है काले झडे लेकर। भैरोलाल को जोरों मे हँसने की इच्छा हुई, लेकिन समय देखकर चुप रह गये।

तभी मत्रीजी गाड़ी से बाहर निकल आये। सीधे पुलिस वालो की ओर बढ़े। फिर जोर से चिल्लाये—आप लोग यह क्या कर रहे है? क्यों आप लोगों ने इन्हें पकड रखा है? छोडिये इन्हें।

पुलिस वाले सकपका गये, उनका अफसर आगे बढा। थोडा झिझकते हुए बोला—ये लोग यहां दगा करने पर तुले हैं सर। ऐसी हालत मे इन्हें छोड़ा कैसे जा सकता है?

क्यों नहीं छोड़ा जा सकता ? आपने कैसे समझ लिया कि लोग दंगा करने पर उतारू हैं ? ये लोग हमारे अपने आदमी हैं, हमसे इनको कुछ शिकायतें हो सकती हैं, ये लोग हमसे नाराज हो सकते हैं लेकिन यह सब इनका अधिकार है, इसलिए कि ये लोग हमारे अपने आदमी हैं।

पुलिस अफसर अजीब साप-छुछूंदर की स्थिति में पड़ गया। बोला—हम मजबूर हैं सर। इन लोगों ने आपकी जान लेने की कोशिश की है। इन लोगों पर मुकदमा चलाया जाएगा। हम किसी भी स्थिति में इन्हें छोड़ नहीं सकते।

नहीं छोड़ सकते तो कर लीजिए मुझे भी गिरफ्तार। चलाइए मुझ पर मुकदमा। मैं इनके साथ जेल जाऊंगा। नहीं रहना है मुझे मन्त्री-वन्त्री। मैं आज ही इस्तीफा दे दूंगा—कहकर उन्होंने अपनी टोपी उतार दी और हाथ पुलिस वालों की ओर बढ़ा दिये।

पुलिस अफसर पसो-पेश में पड़ गया—ठीक है सर, हम आपकी बात मान लेते हैं, लेकिन यह भरोसा तो हो कि ये लोग बेमतलब शोर-गुल नहीं करेंगे।

पहले आप इन्हें छोड़िए तो सही, मन्त्रीजी ने तड़पकर कहा—ये लोग शोर भी करेंगे तो मुझे कोई चिन्ता नहीं है। ये लोग मेरी जान भी ले लेंगे तो मैं आपसे कहने नहीं जाऊंगा। मैं जो कुछ हूं, इन्हीं की बदौलत हूं।

पुलिस वालों ने उन लोगों को छोड़ दिया। वे लोग मन्त्रीजी की ओर देखते हुए भीड़ में शामिल हो गये।

अब मन्त्रीजी भी उनकी ओर बढ़े। टोपी हाथ में लिए, दोनों हाथ जोड़े धीरे-धीरे नजदीक जाकर बोले—आप लोगों की जो मर्जी हो, कीजिए। आपकी दी हुई हर सजा मुझे मंजूर होगी।

लोग एकाएक चुप हो गये। मन्त्रीजी जमीन पर बैठ गए। उनका सिर आगे की ओर झुक गया था। लोगों की समझ में नहीं आ रहा था कि वे क्या करें ?

तभी ठाकुर साहब भीड़ से निकल कर सामने आये—'भाइयो, तुम लोग इस आदमी का यकीन मत करो। यह ढोंगी है। तुम्हारी वोट लेने के लिए आया हैं, तुम्हें मूर्ख बना रहा है। इसकी बातों में मत आओ।

भीड मे थोड़ी हलचल हुई। एक-दो आगे बढ़े—हा, यह ढोंगी है। इसका विश्वास करने की जरूरत नही है।

मत्रीजी उठ खड़े हुए। लोगों ने देखा, उनकी आंखें नम हो गयी है। रुंधे कण्ठ से बोले—भाईजी ने बिलकुल ठीक कहा। मैं ढोंगी हू, आपका वोट लेने के लिए आया हूं, लेकिन भाइयो, मैं कसम खाकर कहता हूं, मैं आपसे वोट नही मागूगा। मैं तो बस आपसे मिलने के लिए आया हू।

ठाकुर साहब गरज उठे—अब तक कहा थे आप? इतने दिनो से हमारी याद नही आयी थी? बड़े आये मिलने वाले। क्यों हलीम भाई? ठाकुर साहब ने एक दाढी वाले आदमी की ओर देखते हुए कहा।

ठीक कह रहे हो ठाकुर साहब। अब हम लोग इनकी बातों मे नही आयेंगे। इनका यह नाटक पहले भी देख चुके है। अच्छा होगा, ये यहा से चले ही जाये—हलीम भाई ने कहा।

आपके कहने से चला जाऊ। ठाकुर साहब कह रहे हैं। इनका गुस्सा तो समझ मे आता है। लेकिन आप जाने के लिए कहने वाले कौन है? ये लोग मेरे भाई है। ये लोग जूता भी मारेगे तो मैं बर्दाश्त कर लूगा।

हलीम भाई के चेहरे का रग उड़ गया। दूसरे लोग बिलकुल शात खड़े रहे। मत्रीजी की बात का उन पर थोड़ा असर हुआ था। तभी ठाकुर साहब ने कहा—ठीक है, लेकिन आप हमारे गाव मे नही जा सकते।

नही जाऊगा, मंत्री ने कहा—अगर इस गांव के बडे-बूढ़े मुझसे कहेंगे तो मैं गाव में नही जाऊगा। फिर साफ-सुथरे कपड़ों वाले एक वृद्ध के निकट जाकर बोले—आप ही कहिए काका, क्या मैं इतना बुरा हो गया हूं कि गाव में भी नही जा सकता, वह भी आप लोगों के रहते?

वृद्ध की समझ मे नही आया कि वह क्या जवाब दे। फिर कुछ सोच कर बोला—बुरे हो या अच्छे, जब गाव मे आ गये हो तो यू ही जाने के लिए मैं नही कह सकता। हम गाव वाले तो अपने दुश्मनो से भी ऐसा व्यवहार नही करते।

आप कितने अच्छे हैं काका, मेरे स्वर्गीय पिताजी की तरह! मत्रीजी ने कहा—लेकिन अभी मैं गांव मे नही जाऊंगा। गांव के सभी लोग जब तक नही कहेंगे, मैं गाव नही जाऊंगा।

गाव के लोग कभी भी ऐसा नही कहेगे, आपने इन गाव वालो के लिए किया ही क्या है ? ठाकुर साहब ने ज़ोर से कहा—नारे लगाओ भाइयो··· बाबू।

लेकिन इस बार जवाब में उठने वाला मुर्दाबाद का स्वर बहुत ऊचा नही उठा। भीड़ से निकल कर एक आदमी सामने आया—तुम्हारे कहने से हम नारा नही लगायेंगे, मत्रीजी ने हमारे लिए कुछ किया हो या नही, तुम्हारे लिए तो किया ही है।

ठीक है, पर मुझ अकेले के लिए करने से क्या होता है ? आप लोगों के लिए इन्होंने क्या किया है ?

इस बार एक नौजवान आगे आया—हमारे लिए तो सचमुच इन्होंने कुछ नही किया। पिछली बार गाव की सड़क के बारे में इनसे मिलने गया था, तो जानते हो, इन्होने क्या कहा ?

ठाकुर साहब इस घटना के बारे में कई बार सुन चुके थे, इसलिए चुप रहे। लेकिन एक-दूसरे आदमी ने पूछा—क्या कहा था ?

कहा था कि मैं आपको नही जानता। आप चले जाइये।

हा, कहा था। मुझे याद है कि मैंने ऐसा ही कहा था लेकिन तुम भी तो भैया, बुरा मान कर लौट आये। तुमने यह जानने की कोशिश भी की कि वैसा मैंने क्यों कहा था ? यही गुरुजी हैं, इनसे पूछ लो कि तुम्हे ढूढने के लिए मैंने उन्हे स्टेशन तक भेजा था या नही ?

भैरोलाल और उनके साथ के लोग मत्रीजी को गाव वालो के साथ जिरह करते देख वहा आ गये थे। अब जबकि मत्रीजी पूरी बातचीत में भैरोलाल को भी घसीट लाये तो उन्हें याद नही आ रहा था कि मत्रीजी ने उन्हें किसी आदमी को ढूढने के लिए स्टेशन तक भेजा था। लेकिन वे जानते थे कि ऐसे मौको पर उन्हे क्या कहना होता है। बोले—तुम विश्वास करोगे भैया, मत्रीजी के कहने पर मैं तुम्हें कितनी देर तक छह बजे वाली पैसेंजर ट्रेन में डब्बे-डब्बे ढूढता रहा था।

युवक का चेहरा उतर आया था—आखिर ऐसी कौन बात थी···

वही बताने के लिए मैं तुम्हें दुबारा ढूढ रहा था भैया। दरअसल उसी दिन मत्रिमडल की बैठक में मैंने मुख्यमत्री से यह कहा था कि मेरे क्षेत्र मे

चीनी का एक बड़ा कारखाना लगाया जाय जिससे मेरे इलाके के हजारों लोगों को काम मिल सके। लेकिन मुख्यमंत्री मुझ पर बिगड गये थे। यह कहते हुए कि सब-कुछ आप अपने ही इलाके मे चाहते हैं, चाहे नई सडक बनवाने की बात हो या नया कारखाना लगाने की। अब आप लोग समझ लीजिए कि उसी समय से मुख्यमत्री से मेरी बोलचाल नही है। दूसरे मत्री भी मुझसे नाराज हैं। अब बताइये, मैं क्या करूं!

उपस्थित लोगों के चेहरे अब आक्रोश-रहित हो गये थे। मगर उस नौजवान ने फिर कहा—फिर भी आपको उस तरह से बात नही करनी चाहिए थी।

तुम्हे भी भैया, कम-से-कम अपना परिचय तो ढग से देना चाहिए था। अगर तुम पहले ही बता देते कि तुम सीताराम भैया के लड़के हो तो ऐसा मैं क्यों कहता? कहते हुए मंत्रीजी ठाकुर साहब के पास खड़े बूढे आदमी के निकट जा पहुंचे—तुम्ही कहो सीताराम भैया, हमारी-तुम्हारी आज की जान-पहचान है? अब तुम्हारा लडका मेरे पास जाय और तुम्हारा नाम भी न ले, तब भला मैं कैसे पहचानूंगा उसे?

सीताराम मिश्र गद्‌गद्‌ हो गये थे। यह बात तो तुम ठीक कहते हो मंत्रीजी। आजकल के लडके तो बाप का नाम लेने मे भी शर्माते हैं। इसको कहना चाहिए था।

नौजवान इस दृश्य को देखकर सन्न रह गया। कभी तो उसके बाप ने उससे नही कहा था कि मंत्रीजी से उसकी जान-पहचान भी है, अब इसमे बेचारे मत्रीजी का क्या दोष!

तभी ठाकुर साहब ने कहा—ऐसी बात है तब तो हम लोगों से बडी गलती हुई।

फिर भी तुम लोगों का गुस्सा जायज है, मंत्रीजी ने कहा—अब मैंने भी तय कर लिया है।

क्या? कई लोगों ने एक साथ पूछा!

यही कि अब मैं चुनाव नही लड़ूंगा। जब मुझसे कोई काम ही नही होता, तब फिर चुनाव लड़ने से क्या फायदा। मेरी जगह पर तुम लोगों मे से कोई नया आदमी जाय, वह ज्यादा ठीक होगा।

सभी लोग हक्के-बक्के रह गये। यह क्या कह रहे हैं मंत्रीजी ! ठाकुर साहब के बडे लड़के ने कहा---यह क्या बात कह रहे हैं आप ? दूसरा कोई चुनाव जीतकर आयगा भी तो मत्री थोडे ही बनेगा। आप तो इस बार मुख्यमत्री भी हो सकते है।

हो सकता हू, लेकिन अब मैं चुनाव नही लड़ूंगा, मंत्रीजी ने निर्विकार भाव से कहा---अब शेष जिन्दगी मैं तुम लोगों के बीच काटना चाहता हूं।

बूढे सीताराम मिश्र ने मत्रीजी के कधे पर हाथ रखकर कहा---ऐसा नही होगा मंत्रीजी। हम ऐसा न होने देंगे। आप लाख बुरे हैं, हमारे अपने आदमी हैं। इन लौंडो की बातों मे आकर हम आपके साथ ऐसा सलूक कर बैठे। हम इसके लिए माफी चाहते हैं। रही बात चुनाव लडने की, सो इस बार तो आपको लडना ही होगा आपका चुनाव हम लोग खुद लडेंगे। अब आप गाव मे चलिए, इतने दिनो के बाद आये हैं, बिना खाये-पीये हम आपको जाने नही देंगे।

मत्रीजी भाव-विह्वल हो उठे---अरे भैया, आप ही लोगों का दिया जो खाता हू। मुझे अब गांव मे चलने के लिए मत कहिए। मैंने कसम खा ली है कि जब तक यह सडक नही बन जाएगी, मै आपके गाव मे पैर नही रखूगा।

अब सडक इतनी जल्दी थोडे ही बनेगी मत्रीजी। आप गाव मे चलिए पहले, मिश्रजी ने कहा और तभी 'मत्रीजी जिन्दाबाद' के शोर से समूचा वातावरण गूंज उठा।

मत्रीजी ने हाथ जोड दिये। मुझ जैसे पापी आदमी का जिन्दाबाद मत करो भाई। मैं इस योग्य नही हू। मुझे तुम लोगो की हालत का पता है। जब तक सडक नही बन जाती, तुम लोगों की दूसरी समस्याओ का हल नही निकलता, मैं गाव मे नही जा सकता।

ठाकुर साहब ने हाथ जोडकर कहा---ठीक है, गांव में हमारे दरवाजे तक न सही, सामने के स्कूल के बाद वाले मन्दिर तक तो चलिए। मैं वहीं पर शर्बत-पानी की व्यवस्था करा देता [redacted]।

मत्रीजी ने परास्त भाव से कहा---ठीक है, वहा तक चलूगा। लेकिन मैं चलूगा पैदल ही। आप लोग ऐसा कीजिए कि गाडियों मे बूढो और

बच्चों को बैठा दीजिए। गुरुजी, आप यह काम कीजिए, कहते हुए उन्होंने गदे कपड़ों में लिपटे एक छोटे से बच्चे को गोद में उठा लिया और आगे बढ़ चले।

गाड़ी में बैठने के लिए बच्चों में होड़ मच गयी थी। उनके घर वाले उन्हें बैठाने में लग गए थे। थोड़ी दूर आगे बढ़ने पर मंत्रीजी ने देखा, उनके साथ केवल ठाकुर साहब चले आ रहे हैं। बाकी लोगों की भीड़ गाड़ियों के इर्द-गिर्द 'मंत्रीजी-जिन्दाबाद' के नारे लगाती चल रही थी।

ठाकुर साहब लपक कर मंत्रीजी के पास आ गए। बोले—आप धन्य हैं सरकार।

धन्य हो तुम ठाकुर साहब। ठीक वक्त पर सीताराम मिश्र के कंधे पर हाथ रखा था तुमने। नहीं तो मैं भला क्या पहचानता उसे।

कुछ भी हो सरकार सब-कुछ आप ही के प्रताप से हुआ है। न आपने कल यह सब बताया होता, न मैं मूर्ख आदमी इस तरह का नाटक कर पाता। सब आपकी माया है।

पीछे-पीछे भैरोलाल भी चले आ रहे थे—झूठ-मूठ मुझको गुरुजी कहा जाता है। गुरु तो बस एक ही हैं—मंत्रीजी।

मंत्रीजी का कारवां फिर उनके पीछे चलने लगा था। बड़े-बड़े उनके साथ हो लिये थे। कुछ दूर चलने के बाद मंत्रीजी की नजर सड़क की बायीं ओर पड़ी। वहां एक खपड़ैल का घर था, जिसका छप्पर जगह-जगह धँसने लगा था। सामने थोड़ी-सी खुली जगह थी, जिसमें एक ओर फूलों के कुछ पौधे लगे हुए थे। वहीं गांव के कुछ अधिक उम्र के लड़के जमीन पर बोरे बिछाये बैठे हुए थे। एक अधेड़ आदमी कुर्सी पर छड़ी लिए बैठा था। लड़के जोर-जोर से कुछ पढ़ रहे थे।

मंत्रीजी ने ठाकुर साहब से पूछा—गांव का स्कूल यही है न?

जी, पांचवीं क्लास तक पढ़ाई होती है।

मंत्रीजी स्कूल की ओर मुड़ गये, उनके पीछे उनका कारवां भी, गाड़ियां सामने की सड़क पर रुक गयी। पुलिस वाले और दूसरे लोग भी एक-एक करके स्कूल की ओर आते जा रहे थे।

इतने लोगों को एक साथ आते देखकर स्कूल में हलचल मच गयी। मास्टर उठ खड़ा हुआ। उसे देखकर लड़के भी। मास्टर ने कुर्सी मंत्रीजी के निकट रख दी। लड़के उनकी स्थिति को देखकर हैरान हुए जा रहे थे। उनकी समझ में नहीं आ रहा था कि दिन भर उनसे छड़ी लेकर बातें करने वाला मास्टर साहब इस समय भीगी बिल्ली बना क्यों खड़ा है।

मंत्रीजी ने एक नजर स्कूल और उसके आस-पास के क्षेत्र पर डाली। फिर मास्टर से पूछा—लड़कों को बाहर क्यों पढ़ा रहे हैं मास्टर साहब ?

जी दरअसल खपरैल जगह-जगह से गिरने लगी है। हर समय लगता है कि अब गिरी, तब गिरी। इसीलिए लड़कों को बाहर ही रखता हूं, सर। कौन जाने कब क्या हो जाय—मास्टर ने कहा।

मंत्रीजी तुरन्त चिन्तन की मुद्रा में आ गये। कुछ क्षणों के बाद बोले—सचमुच कठिन स्थिति है भाई। भीतर बैठने से लड़कों की जान पर खतरा है। फिर गांव के लोगों की ओर मुड़े—अब मैं आप लोगों से एक सवाल पूछ रहा हूं। इस स्कूल की यह हालत कोई एक दिन में नहीं हो गयी है। मुझे लगता है, पिछले डेढ़-दो वर्षों से यह इसी स्थिति में चल रहा है।

जी, दो वर्ष से ज्यादा ही हुआ, एक नौजवान ने कहा।

बहुत खूब, अब आप लोग ही बताइये कि इसके लिए आप लोगों का भी कुछ कर्तव्य था या नहीं ? यहां तो आप ही के बच्चे पढ़ते हैं। इसके लिए कुछ तो करना चाहिए था और नहीं तो आप लोग अधिकारियों के यहां ही जाते, आपस में कुछ चन्दा करते या फिर मुझसे ही मिलते। कुछ न कुछ तो मैं करता ही। लेकिन आप लोग खुद तो कुछ नहीं करेंगे, ऊपर से सारा दोष मुझे देंगे।

दरअसल पिछले चुनाव के समय जब आप आये थे, उस समय हम लोगों ने इसकी ओर आपका ध्यान खींचा था—हलीम भाई ने कहा।

मंत्रीजी हँसने लगे—आप भी भला कब की बात ले बैठे। अरे साहब, उसके बाद भी तो आप लोगों में से किसी को इसके लिए मुझसे मिलना चाहिए था, इस स्कूल का सेक्रेटरी कौन है ?

जी, मैं ही हूं, हलीम भाई ने कहा।

वाह साहब, खूब हैं आप भी। मुझे गांव में इसलिए नहीं आने दे रहे

थे कि मैंने कुछ नहीं किया, दूसरी ओर इतना काम भी आपसे नहीं होता। खुद तो कुछ किया नहीं, दोषी मुझको ठहरा रहे हैं, मन्त्रीजी खूब जोरों से हँसे। फिर हलीम भाई की पीठ ठोकते हुए बोले—तुम भी खूब हो भाई।

हलीम भाई का चेहरा उतर गया। उन्हे लगा, सचमुच उन्होंने गलती की है। बोले—गलती तो मुझसे हुई ही है मन्त्रीजी, लेकिन अब हम सभी लोग यहा इकट्ठा हैं। इसके लिए भी कुछ सोचना चाहिए।

मन्त्रीजी शायद इसी अवसर की प्रतीक्षा कर रहे थे। तपाक से बोले—तुम सोचने के लिए कह रहे हो, मैं अपना काम अभी किये देता हू। आपस मे भी कुछ चन्दा होना चाहिए। फिर चुनाव से निबट कर मैं शिक्षा-विभाग के पदाधिकारियो मे इस सम्बन्ध मे बातें करूंगा। कुछ वहाँ से भी मिल जायगा। कहकर मन्त्रीजी ने भैरोलाल की ओर कुछ संकेत किया। उन्होंने अपने थैले से नोटों की दो गड्डिया निकाली और हलीम भाई को थमा दी।

हलीम भाई को यकीन नही हो रहा था—सचमुच मुझमे गलती हुई सरकार, सारा दोष मेरा ही है। आप तो आज के युग के पैगम्बर है। इतना कहकर हलीम भाई मन्त्रीजी की जयजयकार करने लगे।

मंत्रीजी होठों के भीतर ही मुस्कराये। फिर इस नई स्थिति मे मुह बनाये खडे मास्टर की ओर मुडे—आप यहाँ अकेले है?

जी नही, एक और आदमी हैं, सर। अभी नही है, मां की तबियत खराब सुनकर पिछले दो दिनो से घर गये है।

छुट्टी लेकर गये हैं? मंत्रीजी ने पूछा।

नही, वे भला छुट्टी लेकर क्यो जायेंगे, गांव वालो मे से एक ने कहा—वे तो खुद नेता आदमी हैं। दिन-भर नेतागीरी करते है।

अच्छा, तो यह बात है, मंत्रीजी की त्योरी चढ गयी। फिर मास्टर से बोले—जरा रजिस्टर निकालिए, मैं अभी उनको सस्पैंड करता हूं। जल्दी लाइये।

मास्टर ने रजिस्टर जैसा कुछ कांपते हाथो से मंत्रीजी की ओर बढा दिया। उस पर उन्होंने कुछ लिखा, फिर सावधान की मुद्रा मे अपनी ओर देख रहे एक लडके का माथा सहलाते हुए बोले—मास्टर साहब, आप

शिक्षक हैं, राष्ट्र-निर्माता हैं। आप लोगों के ऊपर देश की नई पीढ़ी को सवारने का भार है। इन लड़कों पर ध्यान देने की जरूरत है ताकि यह भी आगे चल कर महात्मा गांधी, पंडित नेहरू और राजेन्द्र बाबू बन सकें। ये बच्चे हमारे देश के कर्णधार है, इस बात को समझने की जरूरत है।

उपस्थित लोगों पर मंत्रीजी का रौब गालिब हो चुका था। मास्टर अत्यंत सहमे हुए अंदाज मे सब-कुछ समझने का अहसास दिलाते हुए सिर हिला रहा था। उसे इसी स्थिति में छोड़कर मंत्रीजी सड़क पर आ गये।

आपने बिल्कुल ठीक किया सरकार। हलीम भाई ने कहा,—अब कुछ नाश्ता-वाश्ता कर लिया जाय। वहीं सामने वाले मंदिर के पास इंतजाम कर दिया गया है। आप तो गांव में चल ही नहीं रहे हैं।

नहीं भाई, गांव मे तो खैर नहीं ही जाऊंगा। लेकिन मैं जरा गाँव के दूसरे लोगों से भी मिलना चाहूंगा—खास कर यहां के हरिजनों से।

मिल लीजिएगा, लेकिन पहले शर्बत-पानी हो जाय—मिश्रजी ने कहा—वैसे उनका टोला भी मंदिर के पास ही है—गाँव के बाहर।

तब तो ठीक है, कहकर मंत्रीजी आगे बढ़े।

नाश्ते के बाद वे उठ खड़े हुए। शहर से साथ आये लोग भी उठने लगे तो उन्होंने मना कर दिया—आप लोग थोड़ी देर आराम कीजिए। मेरे साथ गांव के ही कुछ लोग चले तो अच्छा होगा।

तभी मिश्रजी ने कहा—हम लोग उधर नहीं जाते सरकार, पिछले साल उन लोगों ने मजदूरी बढ़ाने के लिए हम लोगों के यहां काम करना बन्द कर दिया था। उसी समय कुछ झगड़ा हो गया था। काम तो वे अब करने लगे है, लेकिन हम लोग उनके साथ ज्यादा सरोकार नहीं रखते। कौन जाये इन छोटे जीवों के यहां। फिर इस समय तो वे लोग घरों में होंगे भी नहीं, जहां-तहां काम कर रहे होंगे।

फिर भी उन लोगों से मिल लेना ठीक रहेगा, मंत्रीजी ने कहा और फिर कुछ सोचकर बोले—ठीक है, आप सभी लोग यहीं रहिए। सिर्फ गुरुजी मेरे साथ जायेंगे। अन्य लोग गाड़ियों के पास चलिये या फिर यहीं रहिए। हम लोग जल्दी ही लौटेंगे। फिर मंत्रीजी बोले—इस गांव मे केवल छोटी जात वाले ही मजदूरी करते है क्या?

ज्यादातर यही लोग करते हैं। चार-पांच नगे-लुच्चे और भी करते हैं। लेकिन यहां नही करते। सुबह होते ही शहर चले जाते हैं। यहा का काम छोटी जात वाले ही करते है।

उसके बाद मंत्रीजी भैरोलाल के साथ चल पड़े। इस बीच भैरोलाल ने दूसरे लोगों से टोले के बारे मे काफी जानकारी प्राप्त कर ली थी। वैसे भी वे पिछले चुनावों के दौरान मतदान के ठीक पहले वाली रात को इलाके भर के ऐसे टोलों मे पैसे बांटते रहे थे। मंत्रीजी को भले ही अत्यधिक व्यस्त होने के कारण इन टोलों के नाम पूरी तरह याद नहीं हो, भैरोलाल को अच्छी तरह याद थे।

छोटे-छोटे खपरैलो और झोंपड़ियों का टोला था। टोले मे ज्यादातर लोग काम करने के लिए निकल चुके थे। दो-चार औरतें घरो के बाहर थी। आस-पास कुछ बच्चे खेल रहे थे। चन्द बूढ़े लोग भी एक स्थान पर बैठे हुए थे। भैरोलाल ने मंत्रीजी से कहा—उन्ही बूढ़े लोगों मे से दाढ़ी वाला आदमी मेवालाल है। आप तो उसे पहचानते होंगे।

हां, मंत्रीजी ने कहा और उस ओर बढ़ गये। इन लोगों को देखकर वे लोग उठ खड़े हुए और गोल बांध कर उनके इर्द-गिर्द खड़े हो गये। भैरोलाल ने आत्मीय स्वर में कहा—इस तरह क्या देख रहे हो मेवालाल? अरे, अपने मंत्रीजी आये है।

मेवालाल आगे बढ आया—यही तो देख रहा हूं कि कैसे सरकार को हमारी याद आ गयी, खैर, धन्य भाग जो सरकार हमारे यहा आये। लगता है, कुछ खास बात है, फिर उसने वहीं खड़े एक लड़के से कहा—जरा खाट निकाल कर डाल दे। सरकार आये हैं।

मंत्रीजी ने मेवालाल का हाथ पकड़ लिया—यह सब करने की जरूरत नहीं है भाई, मैं तो तुम लोगों से मिलने आया हूं।

तभी औरतों मे से एक तेज आवाज उठी—खाली वोट लेने के लिए आते हैं, पिछले बरस बाबू लोगो ने हमें मारा-पीटा, हमारे घर जला दिये, हमारे माल-मवेशी हांक ले गये, तब क्यों नही आये थे?

मेवालाल ने उसे डांट दिया—क्या बक रही हो तुम। जानती नहीं, कौन आया है दरवाजे पर।

इसी बीच न जाने किधर से आकर चार-पांच नौजवान भी भीड़ मे शामिल हो गये थे, मेवालाल की बात सुनकर उनमे से एक ने कहा—तुम अपनी मर्जी के मालिक हो लेकिन हम लोग इस बार तुम्हारी बातों मे नही आयेंगे। हम लोग जिसे चाहेंगे, अपना वोट देंगे, या नही देंगे, हमारे वोटो का सौदा तुम मत करना।

मत्रीजी को इस नयी स्थिति से एक झटका लगा। लेकिन तुरन्त ही उन्होंने खुद को संभालते हुए कहा—तुम लोगों का गुस्सा जायज है भाई, मुझे उस सकट के समय यहा आना चाहिए था लेकिन मैं भी क्या करता। सोचा, गाव का मामला है। लोग आपस मे सुलझा लेंगे, वैसे मैंने कलक्टर से इस मामले मे तुम लोगो की मदद करने के लिए भी कहा था।

मदद मिली थी सरकार! हर परिवार को दो सौ रुपये मिले थे। मेवालाल ने कहा।

बस, दो सौ मिले थे? मैंने तो हजार-हजार रुपये देने के लिए कहा था। लगता है, बीच मे अफसर लोग गोल-माल कर गये। इन लोगो से तो और परेशानी है। अच्छा, इस बार इन लोगो की भी खबर लूगा। मत्रीजी के चेहरे पर पर एक साथ पश्चात्ताप और गुस्से के भाव प्रकट हुए, उन्होंने मेवालाल से कहा—तुम कल-परसो तक मुझ से मिल सकते हो?

मेवालाल ने हाथ जोड दिये—क्यो नही, हमें तो आप ही का भरोसा है सरकार। हम लोग हमेशा से आपके पीछे रहे है। आगे भी रहेंगे। आप इनकी बातो पर ध्यान मत दीजियेगा।

मत्रीजी के चेहरे पर सतोष आ भाव आ गया। बोले—ठीक है अब मैं चल रहा हू। आगे कोई सकट आये तो सीधे मेरे पास आना और यह ध्यान रखो, इस बार उन्होंने नौजवानो की ओर भी निगाह डाली—अब जमाना काफी बदल चुका है, तुम्हें अपनी ताकत पर भी अब कुछ भरोसा होना चाहिए। गाव के बडे लोगों से भी अब ज्यादा डरने की जरूरत नही हैं। वे तुम्हें गालियां दें तो तुम भी उन्हें गालियां दो। तुम पर हाथ उठायें तो तुम भी उनका मुकाबला करो। सरकार तुम्हारे साथ है। हम लोगो ने तो अपनी जिन्दगी किसी तरह सब-कुछ झेलते हुए बिता दी। वैसे तुम तो जानते ही हो, मेरा पूरा जीवन तुम्ही लोगों की सेवा मे बीत गया। फिर

देखना, कैसे सब-कुछ बदलता है। अब अभी से तुम लोगों को सारी बातें क्या बताऊं।

इतना कह कर मंत्रीजी वापस लौट पड़े। नौजवान उनके तमतमाये चेहरे को हिकारत से देखते रहे, लेकिन उनके पीछे टोले के बच्चे-बूढ़े चलने लगे थे।

अचानक भैरोंलाल की नजर सामने की दीवार पर पड़ी। वहां एक-दूसरे उम्मीदवार का पोस्टर चिपका हुआ था। उन्होंने मंत्रीजी के निकट पहुंच कर उस पोस्टर की ओर संकेत किया, मंत्रीजी ने उधर देखा, फिर भैरोंलाल का हाथ दबाकर धीरे से बोले—यह उन नौजवानों की शरारत है गुरुजी। हो सकता है, वोट के दिन ये कुछ गड़बड़ करें। खैर, देखा जायेगा। चिन्ता करने की जरूरत नहीं है।

साथ के लोग मंत्रीजी की जय-जयकार कर रहे थे। कुछ ही देर बाद वे सड़क के पास पहुंच गये। वहां गाड़ियां खड़ी थीं और पेड़ों के नीचे लोग बैठकर मंत्रीजी के पीछे आने वालों को देख रहे थे। तभी मंत्रीजी को कुछ याद आया। मेवालाल से बोले—एक-दो दिनों के भीतर तुम मुझसे या गुरुजी से मिलो। और हां, बीच में भी आते-जाते रहो। खैर, अब तुम लौट जाओ। हो सकता है, तुम लोगों को देखकर बाबू लोग कुछ भड़कें। उन लोगों को भी यह शिकायत है कि झगड़े के समय उन्हें मेरी ओर से कोई मदद नहीं मिली। किसी तरह उन्हें रास्ते पर ले आया हूं। लगता है, चुनाव के बाद इन लोगों से निबटना ही पड़ेगा।

जी, मेवालाल ने कहा—अभी इन लोगों से कुछ कहने की जरूरत नहीं है सरकार। किसी तरह वोट पार लग जाने दीजिए।

और वे लोग चले गये।

मंत्रीजी को भैरोंलाल के साथ लौटते देख कर ठाकुर साहब ने पास बैठे लोगों ने कहा—मंत्रीजी साक्षात भगवान के अवतार हैं।

और नहीं तो क्या! उन साले छोटे जीवों के रंग-ढंग देखकर तो हम यह सोच भी नहीं सकते थे कि वे मंत्रीजी को वोट दें, सब मंत्रीजी को वोट देंगे, सब मंत्रीजी की महिमा है भाई, मिश्रजी ने कहा।

तभी चेहरे पर विजय की मुस्कान लिए मंत्रीजी उनके पास पहुंच

गये। लोगों ने चारों तरफ से घेर लिया। वे पसीना पोंछते हुए बोले—चिन्ता करने की कोई जरूरत नहीं है भाई। वहां का काम फिलहाल ठीक हो गया है। मैंने उन लोगों से साफ-साफ कह दिया है कि आगे से मजदूरी के सवाल पर कोई झगड़ा नहीं होना चाहिए। तुम लोगों को जितनी मजदूरी मिलती है, वह कम नहीं है, फिर भी वोट के दिन सतर्क रहने की जरूरत है।

ठीक है, अब इजाजत दें आप लोग! मंत्रीजी ने हाथ जोड़ दिये। सहसा उन्हें कुछ याद आया। ठाकुर साहब को एक ओर ले जाकर बोले—और सब तो ठीक है भाई, लेकिन उस टोले के नौजवानों के लक्षण मुझे अच्छे नहीं लगे, उन पर विशेष ध्यान देना होगा।

यह सब उस उमेसवा की कारस्तानी है सरकार।

कौन उमेसवा? मंत्रीजी ने पूछा।

वही, रनेसरसिंह का बेटा, बाप के मरने के बाद अब उसे नेतागीरी सूझी है। जब-तब उनके साथ मीटिंग करता फिरता है। खैर, आप चिन्ता मत कीजिए सरकार। उधर वोट पड़ेंगे और ये साले घर के भीतर बन्द रहेंगे। आप बिल्कुल बेफिक्र रहिए।

मंत्रीजी चिन्ता से मुक्त होकर अपनी गाड़ी में बैठ गए। खिड़की से सिर निकाल कर उन्होंने हाथ जोड़े—अच्छा, तो अब चल रहा। लेकिन जाते-जाते मैं फिर यह बात कह देना चाहता हूं कि जब तक आपके गांव की सड़क नहीं बन जायेगी, आपके गांव में कदम नहीं रखूंगा।

सभी लोग मंत्रीजी की जय-जयकार करने लगे। तभी बिलकुल मूर्खता-पूर्ण अन्दाज में भैरोलाल भी मंत्रीजी की बगल में आ बैठे। ठाकुर साहब की ओर देखकर उन्होंने खीसें निपोरीं और गाड़ी चलने लगी।

किसलिए, किसके लिए, क्यों

यू तो अखबारों मे उस जिले मे हो रहे उपद्रवो के समाचार मैंने भी पढे थे परन्तु महज एक सरकारी अधिकारी के नजरिये से। वैसे भी उन घटनाओ के प्रति मेरा अपना एक तटस्थ किस्म का दृष्टिकोण था। और क्योंकि वे घटनाएं मेरे कार्य-काल मे नही घटी थी, इसलिए उनसे सम्बद्ध समाचार मेरे लिए कोई विशेष महत्त्व के नही थे।

किन्तु मैं शीघ्र ही उन घटनाओं से जुड़ गया। यह इस तरह हुआ कि प्रांतीय राजधानी से मेरे नाम एक सरकारी पत्र आया जिसका आशय यह था कि मेरी बदली उसी उपद्रवग्रस्त जिले में कर दी गयी है। इस समाचार से मुझे थोड़ी उलझन, या कहिए कुछ हैरानी-सी हुई। इसलिए कि जिस जिले के जिलाधीश पद पर फिलहाल मैं कार्यरत था, वहां आये मुझे मुश्किल से छह महीने ही हुए थे। फिर जैसी कार्य-कुशलता का प्रदर्शन मैंने यहां इस अल्पकाल मे किया था, मेरी समझ से वह मेरे उच्चाधिकारियों और राज्य-मन्त्रिमंडल की नजर में अत्यत प्रशसनीय था और उससे मेरे जिले में वर्तमान शासनतंत्र की जड़ें और ज्यादा गहरी जम गयी थी। मैं नया-नया ही आया था और किसानों ने खाद और बीज की तस्करी और जमाखोरी के विरोध मे एक प्रभावशाली और संगठित आंदोलन आरम्भ कर दिया था। इसने उन दिनों राज्य-सरकार का जीना हराम कर दिया था। वह समय मेरे लिए चुनौती का समय था। तब राज्य के अन्य जिलो से भी इस आंदोलन के समर्थन मे आदोलन भड़क उठने के समाचार आने लगे थे। सरकार के लिए सकट की उन घड़ियो में पुलिस की मदद से जिस तरह मैंने आंदोलन के सूत्रों को एक-एक करके समाप्त करवा दिया

था, उसके लिए राज्य के मुख्यमंत्री ने निजी तौर पर मेरी सराहना की थी, सरकारी रेकार्डों में भी मुझे कुशल और कर्मठ प्रशासक के रूप में दर्ज किया गया था। और अब उसी कुशल और कर्मठ प्रशासक की बदली, वह भी एक ऐसे उपद्रवग्रस्त जिले में, जहां मेरी छोटी-सी भूल भी मेरी बेदाग सर्विस-बुक को कलंकित कर सकती है। इसका क्या मतलब ? कुछ समझ में नहीं आया।

लेकिन जल्द ही पूरी बात साफ हो गई। शाम को ही प्रांतीय राजधानी से मुख्यमंत्री का एक निजी ट्रंक-कॉल आ गया। उन्होंने मुझे यथाशीघ्र राजधानी आकर उनसे मिलने को कहा। मैंने इस आदेश का तत्काल पालन किया। अगले दिन ही मैं मुख्यमंत्री जी के निजी कार्यालय में उनके सामने खड़ा था। वे मुझे बैठने को कहकर सामने पड़ी फाइलों को जल्दी-जल्दी निपटाने में लग गये थे।

बोले—डी. एम. साहब, शायद आप यह जानने को बहुत बेताब हों कि छह ही महीनों में आपका तबादला क्यों किया जा रहा है ? जबकि आपने मौजूदा शासनतंत्र को मजबूत बनाने में औरों से ज्यादा ही अच्छा काम किया है। तो मैं आपसे यही कहूंगा कि सरकार के इस कदम को आप अपने प्रति किसी अहितकारी भावना का प्रतिफल कतई नहीं समझें। हम आपको विश्वास दिलाते हैं कि सरकार ने यह कदम आपको एक कर्मठ और कुशल प्रशासक मानकर ही उठाया है और सरकार उम्मीद करती है कि जिस तरह उस जिले के किसान-विद्रोह को सख्ती से कुचल कर आपने अपनी कार्य-कुशलता का प्रमाण दिया था, उसी तरह इस जिले के उपद्रवकारियों को भी आप करारा सबक सिखायेंगे। मैं व्यक्तिगत रूप से आपको आश्वासन देता हूं कि अगर आप इस नयी जिम्मेदारी को सफलता-पूर्वक निभा लेते हैं तो मैं देखूंगा कि आपकी पदोन्नति की जाती है और आपको कमिश्नर बनाया जाता है।

अब मुख्यमंत्रीजी के इतना सब साफ-साफ कह देने पर उनके प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करना मेरे लिए जरूरी हो गया था। मैंने गद्गद् स्वर में, लेकिन गंभीर भाव से कहा—सर, अपने प्रति आपके इस कृपा-भाव को देखकर मैं हृदय से आपका कृतज्ञ हूं। जो कुछ आपने कहा,

उसके योग्य तो नहीं हूँ, फिर भी जिस विश्वास के साथ आप मुझे यह जिम्मेदारी सौंप रहे हैं, उसे मैं हर कीमत पर निभाने की कोशिश करूँगा। आप देखेंगे कि अगले कुछ दिनों में ही स्थिति पूरी तरह काबू में कर ली जायेगी।

इतना कह चुकने और मुख्यमंत्रीजी से विदा लेने के बाद मैं फौरन अपने नये कार्य-क्षेत्र, इस उपद्रवग्रस्त जिले में आ पहुँचा। सीधा सर्किट-हाउस में जाकर ठहरा। रात को पहुँचा था, फिर भी वर्तमान जिलाधीश महोदय मिलने आ गये। वैसे देखने में तो पूरी तरह संयत नजर आ रहे थे मगर उनकी अंदरूनी घबराहट का हाल भी मुझे तुरंत मालूम हो गया। जब उन्होंने मुझसे हाथ मिलाया और कहा—इस जिले के नये प्रशासक के रूप में मैं आपका अभिनंदन करता हूँ—बस तभी उनकी आवाज की लड़खड़ाहट ने सारा भाँडा फोड़ दिया। उनकी आवाज में शिकस्त तो थी ही, गहरी उदासी भी थी। डरपोक और धर्मभीरु अधेड़ आदमी थे, चार बच्चियों की शादी करनी थी और ऊपर वाले उनसे खुश नहीं थे।

अखबारों से इधर की हालत के बारे में काफी कुछ पता चल गया था पर मैं इससे संतुष्ट नहीं था। मुझे अपने अनुभव के बूते पर मालूम था कि कि बड़े अखबारों में कभी भी जन-आंदोलनों के मूल में छिपे सही तथ्यों की सही जानकारी नहीं दी जाती है। ये अखबार किसी भी ऐसे समाचार को किसी भी हालत में नहीं छाप सकते जिसके छपने से सरकार का पक्ष कमजोर पड़ता है। क्योंकि ऐसे अखबारों के प्रकाशकों के लिए अखबार निकालना महज एक व्यापार होता है। और व्यापार में तो मुनाफे के सिवा और क्या देखा जाता है? सरकार को नाराज कर देंगे तो सरकार विज्ञापन देना बंद कर देगी। हो सकता है, अखबार निकालने पर ही पाबंदी लगा दे। यह तो पाँवों पर कुल्हाड़ी मारना होगा। कौन व्यापारी अखबार ऐसी मूर्खता करेगा? मुझे इस सब की जानकारी होना स्वाभाविक था। क्योंकि मैं खुद भी सरकारी मशीनरी का कोई बहुत महत्वपूर्ण पुर्जा तो नहीं, तो भी एक आवश्यक पुर्जा जरूर था।

इसलिए अखबारी खबरों पर मुझे कम ही विश्वास था। घटनाओं की सही जानकारी हासिल करने के लिए मैंने बहिर्गामी जिलाधीश से

पूछा—बड़े भाई, कैसे क्या हुआ, मुझे विस्तार से कुछ बताइये। शुरुआत कैसे हुई ?

मेरे प्रश्न के उत्तर मे वह वही सारी बातें दोहराने लगे जो कई दिनो पहले अखबारो मे छप चुकी थी। मसलन यह कि पिछले दिनो जिला समाहरणालय मे करीब सौ नयी नियुक्तियाँ की गयी थी। इसी पर जिले के बेरोजगार स्नातको की यूनियन ने उपद्रव शुरू कर दिया। वे लोग यह मांग कर रहे थे कि सभी बेरोजगार स्नातकों को एक साथ और शीघ्राति-शीघ्र नौकरियां दी जायें। या दो महीने के अन्दर-अन्दर नौकरी देने का वचन दिया जाय। अब बताइये······

भाई की बात सुनकर मुझे हँसी छूट गयी और मेरे हँसने का नतीजा यह हुआ कि वह बदहवास-से दिखने लगे। मैंने उन्हे समझाया—देखिए भाईजी, जितना कुछ अभी-अभी आपने मुझे बताया, वह तो मैं पहले ही जानता हूँ। अखबार तो मैं भी पढ़ता हूँ। आप तो वह बताइये जो अखबारों मे नही छपा, ताकि उपद्रवो को दबाने मे मुझे मदद मिले। जितनी सही पोजीशन मुझे मालूम होगी, उतनी ही जल्दी स्थिति काबू मे ले आयी जायेगी। और यह सब जितनी जल्दी सामान्य होगा आपकी पोजी-शन उतनी ही ज्यादा सुरक्षित रहेगी।

मेरे समझाने का भाईजी पर अच्छा असर पड़ा। आश्वस्त से नजर आये। बोले—देखिए, असल मे हुआ यह कि जब हम लोगो ने कुछ लोगो को ऊपर वालो के जोर देने पर नियुक्त कर लिया—आप तो जानते ही है राजनीतिज्ञों के दबाव कैसे होते हैं, और उनकी परवाह न करना कभी-कभी कितना असभव हो जाता है—तो फिर उसी क्रम मे बाकी की नियुक्तियाँ भी थोड़ा-बहुत लेना-देना तय करके तत्काल कर दी गयी। यह सब भी चलता ही है। हर जगह चलता है। तनखाह में होता क्या है आजकल ? मगर गड़बड़ यह हुई कि उन साले बेरोजगार यूनियन वालों ने किसी तरह इसका पता लगा लिया और उन्होने बगैर हमें सम्हलने का मौका दिये नगर-बंद की योजना बना ली। कर भी डाला। नगर-बंद यों तो खैर शांतिपूर्ण रहा, लेकिन उन लोगो को पता नही क्या सनक सवार हुई कि सरकारी डिपो मे घुस गये और पाँच बसों में आग लगा दी।

सरकार द्वारा खरीदे गये गेहूँ के गोदामों में भी आग लगा दी। यह सब शायद पुलिस की अभद्रता की प्रतिक्रिया में था। पर पुलिस से आप और क्या उम्मीद कर सकते हैं ? आखिर मैं पुलिस वालों को तमीज सिखाने तो जाऊँगा नहीं। खैर साहब, फिर हमने उनके खास-खास छह-सात लीडरों को हिरासत में ले लिया और पूरे शहर में दफा एक सौ चवालीस लगा दी। इससे हो-हुल्लड़ तो कुछ कम हुआ, पर ईश्वर जाने कब फिर कुछ हो जाये। राजनीति वाले तो ऐसे मौकों की ताक में ही रहते हैं। कल और कुछ नहीं तो स्कूली लड़कों को ही भड़का दिया। गुपचुप ईश्वर जाने क्या-क्या तैयारियाँ कर रहे हैं। उधर वाले मिनट-मिनट में पूछताछ कर रहे हैं। मुश्किल तो अपन लोगों की है। सख्ती करें तो मुश्किल, सख्ती न करें तो मुश्किल। नौकरी में अब वह मजा नहीं रहा। खैर''' जैसी ईश्वर की इच्छा, ताजा स्थिति यह है कि उपद्रव अब भी हो रहे हैं। छिटपुट रूप में ही सही। पर हो रहे हैं।

बड़े भाई के कथन की समाप्ति तक मैं फिर से मुस्कराने लगा था। मैंने कहा—आप ठीक कह रहे हैं बड़े भाई, नौकरी में बड़ी मुश्किलें हैं। आपने जो कुछ बताया उसके लिए धन्यवाद ! एक बात और बता दीजिए। सरकारी बसों और गोदामों में आग क्या सचमुच यूनियन वालों ने ही *लगायी थी ? या'''आपने ही लगवा दी थी ?*

मेरी बात से वे सकपका गये। लगा फिर उन पर बदहवासी का दौरा शुरू हो जाएगा। स्थिति को सरल करने के लिए मैंने कहा—देखिये बड़े भाई, आप घबराइये नहीं। मैं कोई सी. बी. आई. का आदमी नहीं आपका दोस्त ही हूँ। मैं ये बातें इसलिए जानता हूँ, क्योंकि मैं खुद भी दो-चार बार यह करवा चुका हूँ। मैं फिर आपसे कहूँगा कि जितनी ही सही जानकारी आप मुझे देंगे, उपद्रवों को दबाने में उतनी ही ज्यादा मदद मुझे मिलेगी और उतनी ही ज्यादा आपकी पोजीशन'''।

वह मुस्कराने लगे। खिसियाने लगे। बोले—जब आपको सारी चीजों का अनुभव है, आप सब समझते हैं तो मेरे मुँह से क्यों कहलवाना चाहते हैं ? समझ लीजिए वह सब मैंने ही करवाया था—जान-बूझकर। अपनी पोजीशन की सुरक्षा के लिए। मैं समझ गया। भाईजी से जितना

मालूम किया जा सकता था कर लिया था। दो-चार इधर-उधर की बातों के बाद भाईजी चले गये।

अगले दिन जिले का शासन-सूत्र मेरे हाथों में सौंपकर 'बड़े भाई' चले गये। चार्ज लेने-देने की कार्रवाई बहुत शीघ्र और संक्षिप्त में की गई। उनकी विदाई को भी यथासंभव गुप्त ही रखा गया। जिले की बागडोर हाथों में आ गयी थी और मैं यूनियन वालों को बिना शह के मात देने वाली चाल सोचने में लग गया था।

इसी दिन यूनियन के गिरफ्तार नेताओं ने जेल में ही अपनी मांगें शीघ्र मनवाने के लिए भूख-हड़ताल कर दी। इस समस्या के समाधान के लिए औपचारिक प्रयत्न करने के खयाल से मैं जेल में उन लोगों से मिलने गया। उन लोगों ने बड़ी गर्मजोशी से मेरा स्वागत किया और कहा—हम आप-जैसे कुशल और कर्मठ अधिकारी से आशा करते हैं कि आप हमारी तकलीफ समझेंगे। पुराने साहब की गलत नीतियों पर नये सिरे से विचार करेंगे और हमारे प्रति न्यायसम्मत दृष्टिकोण अपनायेंगे।

मैंने उनके नर्म रुख पर प्रसन्नता प्रकट की और उन्हें आश्वस्त किया कि मैं उनके साथ पूरी तरह न्याय करने की कोशिश करूँगा। लेकिन''' मैंने उनसे कहा'''मैं आपसे अनुरोध करूँगा कि आप अपना अनशन तोड़ दें और अपना आंदोलन वापस ले लें। इससे स्थितियाँ सामान्य हो सकेंगी और प्रशासन को आपकी माँगों पर विचार करने में आसानी होगी।

वे लोग मेरी बात से उत्साहित नजर आये, लेकिन उन्होंने कहा—हम लोग अनशन तोड़ने और आंदोलन वापस लेने को तैयार हैं, बशर्ते आप हमें गारंटी दें कि तीन दिन के अन्दर-अन्दर पिछले दिनों की गयी सभी नियुक्तियों को रद्द कर दिया जायेगा।

यह असंभव था। मैंने कहा—नियुक्तियाँ रद्द करने की गारंटी तो नहीं दे सकता पर इस बात का जरूर आश्वासन देता हूँ कि तीन दिन के अन्दर-अन्दर इस बात की पूरी छानबीन करवाऊँगा कि क्या सचमुच उन नियुक्तियों के क्रम में जिला-प्रशासन ने धाँधली की थी। इस मामले में आप मुझ पर भरोसा रख सकते हैं।

पहले तो वे लोग सहमत नहीं हुए और लगभग पौने घंटे तक आपस

में सलाह-मशविरा करने के बाद—जब मैं सोच ही रहा था कि शायद मुझे ज्यादा छूट देना पड़े—उनमें से एक ने आकर कहा—देखिए सर ! जिस आश्वासन पर अपना आंदोलन स्थगित कर रहे है, वही आश्वासन आपसे पहले वाले जिलाधीश भी दे रहे थे। लेकिन उनकी बात हमने यह कह कर टाल दी कि जब सब कुछ आपकी जानकारी में और आपकी मर्जी से ही हुआ है तब फिर आप जांच किस बात की करवाना चाहते हैं ? लेकिन आपके साथ वह बात नहीं। आप यहाँ नये आये है और हम आपसे इन्साफ की उम्मीद रखते हैं। हम तीन दिनों के लिए अपना अनशन और आंदोलन वापस लेने को तैयार हैं।

और सचमुच अनशन और आंदोलन उन्होंने वापस ले लिया। मैं प्रसन्न था। सब कुछ ठीक-ठाक हो रहा था। मेरी इस प्रारम्भिक असफलता के लिए मुख्यमंत्री ने अपने विशेष दूत द्वारा मुझे बधाई संदेश भेजा था और आशा की थी कि मैं जल्द ही पूरा दगा खत्म करने में सफल हो जाऊँगा।

तीन दिनों तक नगर पूरी तरह शांत रहा। कहीं कोई अप्रिय घटना नहीं घटी। जन-जीवन पूरी तरह सामान्य हो गया। मैं संतुष्ट था। मैं यही चाहता था कि किसी तरह एक बार स्थिति बिल्कुल सामान्य हो जाये और आंदोलनकारी एक हद तक निष्क्रिय और उत्साहहीन हो जायें। दोबारा आंदोलन भड़काना उनके लिए मुश्किल होगा। और उसे कुचलना मेरे लिए आसान।

पहले से तय कार्यक्रम के अनुसार चौथे दिन सुबह-सुबह ही वे लोग मुझसे मिलने आ गये। मैंने उनकी पूरी आवभगत की। डटकर नाश्ता कराया। चाय पिलायी। उन्हें अच्छी लगने वाली बातें करता रहा और आखिर में बड़े सीधे तरीके से मतलब की बात सामने रखते हुए कहा—दोस्तो, अपने वादे के मुताबिक मैंने पूरे मामले की अच्छी तरह जाच करवाई है। कोई कसर नहीं छोड़ी गयी है। हर संभव छानबीन की गयी है। खुशी की बात है कि तीन दिन के छोटे-से समय में भी किसी तरह जाँच का काम पूरा कर लिया गया है उसके आधार पर मैं इस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि नई नियुक्तियों के क्रम में किसी भी प्रकार की अनैतिकता को प्रश्रय

नहीं दिया गया है। न ही किसी सिफारिश को माना गया है। न किसी ने पैसा खाया है। आप लोगों को गलत सूचनाएँ दी गयी हैं। और यह उन तत्वों का काम है जो आपको औजार बनाकर प्रशासन और सरकार को बदनाम करना चाहते हैं। अब आप लोगों से मेरा यही अनुरोध है कि जिले में शांति और व्यवस्था बनाये रखने में प्रशासन के साथ सहयोग करें, यथासंभव ग़लत लोगों के भड़कावे में न आयें और जिम्मेदार नागरिकों की तरह कर्तव्य का पालन करें।

मेरी बात से उनके चेहरे सफेद पड़ गये। लगा, जैसे वे ठगे गये हों। कुछ देर इसी स्थिति में रहने के बाद उनमें से एक ने कहा—लगता है आपने छानबीन पूरी मुस्तैदी से नहीं की...... वरना......

मैंने झट बात काटी—जी नहीं, यह आपकी गलतफहमी है। जांच मैंने पूरी ईमानदारी से की है। इस मामले में आप मुझ पर भरोसा कर सकते हैं। खैर.. अब आप लोग जा सकते हैं।

उस दिन स्थिति, मेरी आशा के विपरीत शांत रही। लगा जैसे यूनियन वालों की हिम्मत चुक गयी हो। सारे दिन मैं साधारण से अधिक खुश रहा। शाम को नगर के सभ्रांत नागरिकों और व्यापारियों की तरफ से मेरे सम्मान में एक समारोह होना था। मैं बड़े ठसके के साथ समारोह में शामिल हुआ। खूब खर्च किया गया था। शाही इंतजाम था। लोग कह रहे थे नगर में ऐसा भव्य समारोह पहले कभी नहीं हुआ। मजा रहा। मेरी तारीफों के पुल बांध दिये गये। अपनी तारीफ सबको अच्छी लगती है। पर यहाँ तो उसकी तारीफ हो रही थी जिसकी तारीफ होनी ही चाहिए। और सबसे आखिर में तो मजा ही आ गया जब पीने-पिलाने का दौर चला। सेठों की जवान बीवियाँ और लड़कियाँ......खैर। रहने दीजिए एक ज़िम्मेदार सरकारी अधिकारी को ज्यादा कुछ नहीं कहना चाहिए।

अभिनंदन-समारोह समाप्त होने पर ज्योंही मैं चलने को हुआ, मैंने कार स्टार्ट की ही थी कि कुछ फटेहाल लोग अँधेरे से निकल कर मेरी कार के आगे आकर खड़े हो गये। उनके हाथ में किसी तरह के कुछ झंडे भी थे और उन लोगों ने एक तरह से मेरा घेराव ही कर लिया था। एक क्षण के लिए घबराहट का-सा अनुभव हुआ। सुरक्षा का कोई इंतजाम

साथ नही था। बड़े शहरों में ऐसे ही मौकों पर खून-खराबा हो जाया करता है। मैं तरंग में था। मन चौकन्ना और इंद्रियाँ शिथिल। इंजन बंद कर दिया। कुछ लोग सामने से हटकर बाजू में आ गये और बडी बेहूदगी के के साथ लगभग धमकाते हुए मुझसे पूछने लगे कि मैं इस समय इन काले बजारियों के यहाँ क्या कर रहा था ? मैं न जवाब देने की स्थिति मे था, न जवाब दे सकता था। अचानक कोई हाथ अंदर बढा और मैंने फुर्ती से मोटर स्टार्ट कर दी। सोचने का समय नही था। एक क्षण भी रुकना घातक हो सकता था। कार एक झपाटे के साथ आगे बढी। पीछे किसी के छिटक कर गिरने की आवाज आयी। किसी ने कहा—साला'''सेठो का कुत्ता है यह भी'''क्या मैं सेठो का कुत्ता हूँ ? गरदन पर पसीना-सा बहने लगा।

लौटते ही एस. पी. साहब को फोन किया और कुछ सिपाही भिजवा दिये। 'उन लोगों' का नुकसान न हो। फिर झुंझलाता रहा। क्यों भिजवा दिए ! पब्लिक सेठों के घर ही जला डालना चाहेगी तो क्या उसे मैं रोक लूँगा ? उस गुस्से को कौन रोक सकेगा ? शायद कोई नहीं।

अगले दिन जब कार्यालय जा रहा था तो मैंने देखा कि जिला समाहरणालय के आगे बेरोजगार यूनियन के लाल झडे लहरा रहे थे और बद-हाल नौजवानों की एक भीड़ जमा थी। वे लोग मेरे विरोध मे नारे लगाते हुए जल्द से जल्द उन नियुक्तियो को रद्द करने की माँग कर रहे थे, जो उनके अनुसार घूस और सिफारिश के आधार पर हुई थी। मैं उन लोगों को हिकारत की नजर से देखते हुए अंदर चला गया। मालूम हुआ यूनियन के नेता आज से आमरण अनशन पर बैठ रहे हैं। मैंने सोचा, इस खबर पर मुझे हँस देना चाहिए। क्योंकि ये चोंचले यूनियन के नेतागण अपने साथियों मे अपनी गिरी हुई साख को दोबारा कायम करने के इरादे से ही आजमा रहे होंगे। पर हँस सका ही नही। हँसी आई ही नहीं। शायद इस आशंका मे कि जब यह तूफान अब तक नही दबा तो उसका मतलब है कि कोई न कोई विरोधी राजनीतिक दल इन्हें जरूर शह दे रहा है। लोकल राजनीति मे ऐसी चीजें चलती रहती हैं। मुझे उन लोगो से बात करनी

चाहिए। राजनीति वालो से बात करना बडा मुश्किल काम है। खैर! लेकिन इसमे भी ऐसी क्या बात है जिससे मैं······

अनशन चलता रहा। मैंने अपनी राजनीति नही बदली। अखबारो मे एक विज्ञप्ति जरूर निकलवा दी कि मैंने नयी नियुक्तियों के मामले की जाच स्वय की है और मुझे नही लगता कि कही भी कोई भ्रष्टाचार हुआ है। मैं बेरोजगारो के साथ पूरी सहानुभूति रखता हू और वचन देता हू कि उनकी भावनाओ का सम्मान करते हुए शीघ्र ही कुछ और नियुक्तिया करने की व्यवस्था करूगा। हालाकि सरकार की स्थिति...नौकरी के भरोसे ही नही...क्योंकि हरेक को. . ..वगैरह। और हा, यह भी कि यह तभी सभव है जब यूनियन वाले आदोलनकारी मनोवृत्ति छोडें और प्रशासन के साथ सहयोग करें।

लडको के हाथ सबूत नही लग रहे थे। मैं तेजी से इसी मे जुटा था कि लडके सबूत न पा सकें। सी०एम० साहब का टेलिफोन आ चुका था, वे खुश नही थे।

अनशनकारियो मे से एक की हालत चिन्ताजनक हो गयी। उसका बाप रिटायर्ड बाबू था। बी० ए० मे फर्स्टक्लास था। शहर मे सनसनी थी। विभिन्न ट्रेडयूनियन दफ्तरों की बिजलिया रात मे भी जली रहने लगी थी। मत्रिमडल तक तार चले गये थे। एस० पी० भी सतर्क थे। मैं चिंतित था। शीघ्र कोई कदम उठाना था—लडके के मरने से पहले। मुख्यमत्री जी की जवाब-तलबी से पहले।

मुझे सूझा। मैंने सोचा कि उनके कुछ पूछने से पहले मैं ही उनसे पूछ लू, स्थिति से उन्हें अवगत करा दू। मैंने मुख्यमत्रीजी से बात की। उनका खयाल था कि सरकार का इस स्थिति मे झुकना ठीक नही है। इसका अच्छा असर नही पडेगा। विरोधी दलों को मौका मिल जायेगा। वह अपनी भाषा मे सोच रहे थे। मुझे अपनी सर्विसबुक की चिन्ता थी। अफसरो मे भी अब इस प्रसंग को टाला जाने लगा था। स्थिति, यानी, सचमुच गभीर थी।

अगले दिन दूसरे लडके की हालत भी खराब हो गयी थी। पहले को अस्पताल पहुचा दिया गया। दो नये लडको ने पुरानों की जगह सम्हाल

ली। स्थानीय अखबारों ने हल्ला मचाना शुरू कर दिया। लगभग सभी पार्टियों के नेता परेशान करने लगे। जल्दी समाधान खोजो। जल्दी, जल्दी.. क्या जल्दी ? किस तरह जल्दी ?

मैं उनसे मिलने गया। बढ़ी हुई दाढ़ियां, धसी हुई लेकिन धधकती आंखें...जवाब मांगते चेहरे...काम मांगते हाथ। मैंने नम्रता से कहा—दोस्तो, यदि आप चाहें तो मैं उच्च न्यायालय के किसी न्यायाधीश की अध्यक्षता में एक जांच आयोग के गठन का सुझाव राज्य सरकार को देने को तैयार हूं। मैं सोचता हूं कि...शायद मेरी आवाज प्रार्थना करने जैसी हो गयी थी।

लेकिन वे नहीं माने। उन्होंने मेरी बात सुनी तक नहीं। उन्हें जांच नहीं, नियुक्तियां रद्द किये जाने का आदेश चाहिए था। वे पीछे हटने की स्थिति में नहीं थे। लेकिन मैं...? मैं किस स्थिति में था ?

मैं उस स्थिति में था जहां किसी को भी क्रोध आ जाता है। और वह अपना आपा खो बैठता है। मैंने यथासंभव शांत रहते हुए उन्हें याद दिलाया कि उन्हें सरकार की मजबूरियों को समझना चाहिए, क्योंकि व्यक्तिगत स्वार्थों से भी बड़ी एक चीज होती है जिसे कहते हैं—देश।

और मुझे जवाब मिला कि देश से भी बड़ी एक चीज होती है जिसे कहते हैं—भूख।

तब ठीक है। मैंने कड़ककर कहा और सारा गुस्सा बाहर आ गया—अगर आप लोगों को अपने देश की चिन्ता नहीं है तो मुझे, सरकार को आप लोगों की भी फिक्र नहीं है। आपके हित में देश का हित ज्यादा महत्वपूर्ण है। उसी को ध्यान में रखना है मुझे। अब चाहे आप लोग अपनी जान ही देने पर उतारू हो जायें, हम आप लोगों के लिए कुछ नहीं कर सकेंगे और......

अभी मैंने अपनी बात खत्म भी नहीं की थी कि पता नहीं कहां से आकर एक पत्थर मेरी आंख के पास लगा। मैं सम्हलूं—सम्हलूं कि ईंट-पत्थरों की बौछार शुरू हो गयी। लड़कों ने मुझे घसीट कर एक तरफ फेंक दिया था और खुद सामने की दीवार के पीछे जमा हो गये थे। मैंने फुर्ती से उठकर एक बेंच के पीछे छिपते हुए चीखकर पुलिस वालों से अश्रु गैस के

गोले छोड़ने को कहा। आदेश का तुरन्त पालन हुआ। कुछ पल के लिए भीड़ तितर-बितर हुई लेकिन फिर सब जमा हो गये और पत्थरों की बौछार फिर शुरू हो गयी। कार्यालय के सभी कर्मचारी भाग-भागकर बाहर निकल गये और चटाक-चटाक खिड़कियों-दरवाजों के शीशे टूट-टूटकर गिरने लगे। इतना भी समय नहीं था कि अतिरिक्त पुलिस-शक्ति के लिए फोन किया जा सके। मेरे मातहतों में से फिलहाल कोई भी नजर नहीं आ रहा था।

अश्रु-गैस का प्रभाव समाप्त हो गया था। लड़कों की हिम्मत बढ़ गयी थी। हमारी तरफ भगदड़-सी मची हुई थी और विमूढ़ता की-सी स्थिति थी। अचानक माथे का खून रूमाल से पोंछकर सामने देखा कि लड़के आगे बढ़ रहे थे, वे अनेक थे...असंख्य...कतारबद्ध.. एक ही भावना से जुड़े हुए...शक्तिवान् और खतरनाक। उनमें से कुछ के हाथ में चाकू की तरह की चमचमाती चीजें थीं—कुछ के हाथ में हॉकी की स्टिकें—और शेष सभी के हाथों में छोटे-बड़े नुकीले पत्थर। मुझे लगा सभी की नजरें मेरी तरफ हैं। और सभी मिलकर यह फैसला कर चुके हैं कि मुझे जान से मार डालेंगे। मैंने सिपाहियों की कतार को देखा और हुक्म दिया कि अश्रु गैस छोड़ी जाय। कुछ नहीं हुआ। कार्यालय की इमारत के बाएं भाग से ऊपर धुआं जरूर उठता दिखाई दिया। यह नयी बात थी। उधर हमारा रेकार्ड सेक्शन था। भीड़ नजदीक आ रही थी। मैंने चीखकर लाठी-चार्ज का हुक्म दिया। कुछ नहीं हुआ। बाएं भाग में दूसरी मंजिल की गैलरी से लपटें निकलती दिखाई देने लगीं। भीड़ और नजदीक आ गयी थी। मैं पूरी ताकत से गरजा, फा—य—र...! मगर कुछ नहीं हुआ। पुलिस वाले हिले तक नहीं। मैं लपककर सबसे नजदीक खड़े सिपाही के पास पहुंचा और उसका हाथ भींचकर चीखा—गोली चलाओऽऽ।

उसने बड़ी आसानी से मेरा हाथ झटक दिया और बड़ी ठंडी आवाज में बोला—किस पर? वे हमारे लोगों के ही बच्चे हैं। अपने बच्चों पर ही गोली चलायें? किसलिए? तुम जैसे कमीनों के लिए? सारी दुनिया जानती है कि पैसे खाये गये थे...उसने हिकारत से मुझे देखा और पीछे सिर घुमाकर थूक दिया। चार-छह सिपाही और नजदीक आ गये। वे सब

मुझे घूरकर देख रहे थे। उनकी आंखों में एक पथरायी हुई नफरत और ठंडी आग थी जिसका सामना करना असंभव था...उनमें से एक...किसी एक ने मुंह बिदकाकर कहा—सेठों का कुत्ता...और बिजली से लगे झटके की तरह मुझे वह रात याद आ गयी जिस रात......

अंधेरा ही अंधेरा था। एक गरम-नमकीन-चिपचिपी चीज मेरी आंखों पर, नाक पर, मुंह पर, सारे चेहरे पर फैल गयी थी...जैसे असंख्य आरियों से मुझे एक साथ चीरा जा रहा हो, शायद वे सब मिलकर मुझे जूतों से मार रहे थे। प्रतिरोध की शक्ति समाप्त हो चुकी थी...और मैं संज्ञाशून्य हो गया।

इस वार फिर

हाक सुनकर गनेसी उठ वैठा। इतने सवेरे तो उसे कोई नही पुकारता। जब से शरीर थक गया है, उससे इतनी सुवह उठा भी नही जाता। वहू खुद ही घर के दूसरे काम करते-करते गाय को वाध देती है, उसे दुह भी लेती है, साथ ही चारा भी डाल देती है। गनेसी तो तव उठता, जव नन्हका पोता आखे मलते-मलते उसके पास आ बैठता और तरह-तरह के सवाल पूछने लगता। आखिर वह पोते को गोद मे उठाये घर के बाहर वाले बरामदे मे आ बैठता। उस समय तक दिन पूरी तरह निकल आया होता है।

हाक फिर पडी थी। गनेसी उठकर चलने को हुआ, तभी वहू आ गई थी। बोली—बाहर पांडेजी तुम्हे पुकार रहे है दादा। कोई काम है शायद।

मुझसे कौन काम होगा! गनेसी भुनभुनाया—वह भी इतने सवेरे। फिर वह बाहर आ गया।

पाडेजी बरामदे के नीचे खडे थे। गनेसी ने उन्हे हाथ जोडा—पाव लागू बावा।

जीते रहो, पाडेजी ने कहा—तू तो विल्कुल साहब हो गया है रे? इतनी देर तक भला आदमी बिछावन पर रहता है।

गनेसी ने खीसे निपोर दी—अरे नाही बावा, साहब क्या होऊगा। वह भी इस उमर मे। अव तो चला भी नही जाता। न पेट-भर खाने को मिलता है और न ढंग का पहनने को। जव जवान था, तव तो साहब बना

ही नही। अब क्या साहब बनना है। अब तो हमारी किस्मत ही फूट गई है बाबा।

गनेसी के स्वर मे करुणा उमड़ आयी थी। लेकिन पाडेजी को इससे कोई मतलब नही था। बोले—सो तो ठीक है। यही दुनिया का नियम है। कभी किसी के दिन एक जैसे रहे हैं, जो तेरे ही रहेगे। सब भगवान के हाथ में है, जो वह चाहेगा, वही होगा। रोने-कलपने से थोड़े कुछ होता है। अच्छा तो बता, आज तू खाली है न ? कही काम तो नही कर रहा है ?

गनेसी ने लम्बी सास भर कर कहा—अब इस उमर मे मुझमें काम होता ही कहा है बाबा। शरीर तो गिर गया है। बंजू की मौत ने मुझे तोड कर रख दिया है। अब चाह कर भी कुछ नही कर पाता। काम-धाम तो जितना होता है, सब बहू करती है। उसी की कमाई मे घर की रोटिया चल जाती हैं किसी तरह।

अरे, जिन्दगी और मौत, सब भगवान का खेल है। जो भी इस ससार मे आया है, उसे एक-न-एक दिन मरना ही तो है। कोई बरस दो-बरस आगे मरता है तो कोई पीछे। पाडेजी ने निर्विकार होकर कहा।

सो तो है, लेकिन बाप की जिन्दगी मे बेटा जाय, यह तो पूर्वजन्म की किसी बड़ी गलती का ही फल है बाबा। गनेसी का स्वर रुआसा हो आया था—अब मुझसे कुछ नही होता पडितजी। शरीर का जोर ही खतम है। अब तो बिना तेल के दीये की तरह, किसी तरह टिमटिमा रहा हूं।

गनेसी की बातों से पाडेजी को झुझलाहट हो रही थी, मन-ही-मन। कहां तो आये थे जरूरी काम से, कहा गनेसी ने उन्हे अपने दुखडे-धधे मे फसा लिया। बोले—छोटकी बचिया के यहां सौगात ले जाना है रे। शादी के बाद से कुछ भी नही भेज पाया हू। सोचा, तू खाली है, तेरे ही हाथों भेज दू। जरा बचिया का हाल-समाचार ढंग से पूछ लेना।

गनेसी ने हाथ जोडे—मुझसे तो जाया ही नही जायगा बाबा। देख ही रहे है, देह थउस गई है। किसी दूसरे को भेज दीजिए।

पाडेजी गरम हो गये—किसको भेज दू ? सब तो दौनी-कटनी मे लगे हुए हैं। किसे फुरसत है जो मेरी सुनेगा। सुन, ना-नुकुर मत कर। चला जा। सामान भी उतना नही है, जो तुझसे चलेगा ही नही। और

फिर बैठा ही तो रहता है, जायेगा तो दो-चार रुपये भी मिलेंगे ही।

इसी बीच न जाने कब बहू दरवाजे पर आ खड़ी हुई थी—दादा से तो अब कुछ काम होता ही नहीं बाबा। आप किसी दूसरे को ही भेज दीजिए न।

पांडेजी का पारा अब और चढ़ा—अब तू भी लगी नवाबी छांटने। दूसरा कोई मिलता तो तेरे ही यहां आने की क्या जरूरत थी? फिर एकाएक अपना स्वर नरम करते हुए बोले—देख बंजूकी बहू, इज्जत का मामला है। और फिर गनेसी बिल्कुल अपाहिज भी तो नहीं हो गया है। अभी तो अच्छी-खासी मजबूत देह है इसकी। थोड़ी दूर जाने से मर थोड़े ही जायगा।

बहू ने एक नजर गनेसी को देखा। फिर बोली—अगर जा सको तो चले ही जाओ दादा। पंडितजी की इज्जत का सवाल है। फिर पांडेजी से बोली—जाने से पहले दादा को कुछ खिला दीजिएगा। मेरे यहां अभी कुछ खाने को नहीं है।

तू इसकी फिकर मत कर, पांडेजी ने कहा—हां तो, जरा जल्दी आ जाना गनेसी। दिन गरम होने से पहले ही पहुंच जायेगा तो अच्छा रहेगा।

चलिए, मैं आता हूं, गनेसी ने कहा। वह दिशा-मैदान जाने के लिए तैयारी करने लगा था। बहू को पुकार कर बोला—जरा लोटे में पानी दे जाना।

इस बीच पांडे जा चुके थे।

गनेसी जब पांडेजी के दरवाजे पर पहुंचा, उस समय तक दिन काफी निकल आया था। पांडेजी दरवाजे पर ही खड़े थे। गनेसी को देख कर बोले—इतनी देर क्यों लगा दी। अब तक तो तुम कोस भर गये होते।

गनेसी कुछ नहीं बोला। पांडेजी अन्दर चले गये और कुछ देर के बाद एक बड़ा सा टोकरा लिये बाहर आये। टोकरे को रंगीन चादर से बांध दिया गया था। फिर जेब से एक चिट्ठी निकाली और गनेसी को देते हुए बोले—समधीजी को मेरा प्रणाम कह देना। बाकी हाल-समाचार चिट्ठी में लिखा हुआ है।

गनेसी ने चिट्ठी लेकर अधफटी कमीज की जेब में डाली और खड़ा

रहा। पाडेजी फिर बोले—तो अब जाओगे न ?

हां, गनेसी ने कहा—जल्दी से मुझको खिला दीजिए। सवेरे निकल जाना ठीक रहेगा। फिर लौटना भी तो है।

सो तो है। ठहरो देखता हूं, कहकर पाडेजी भीतर गये। कुछ देर बाद लौटे तो हाथ मे एक डलिया थी। बोले—अभी खाना नहीं बना है। तुम्हें देर हो रही है। यह चबेना गमछे मे बांध लो। रास्ते में कहीं कलेवा कर लेना। फिर खाने के समय तक तो रामपुर पहुंच ही जाओगे।

गनेसी झुझला गया—वहां के भरोसे बिना खाये जाऊं ? मुझसे चला नहीं जायगा। एक तो वैसे ही शरीर मे जोर नहीं है, ऊपर से बिना खाये चार कोस पैदल चलना। यह मुझसे नहीं होगा।

पांडेजी की त्यौरी चढ गई, लेकिन तुरन्त ही सोचकर सहज हो गये। बोले—इस बुढ़ापे में इतना मुक्खड़पन ठीक नहीं लगता गनेसी। अब डलिया भर चबेना दे रहा हूं तो मुट्ठी-भर भात खिलाने में कौन सी बात थी ?

लेकिन गनेसी सहज नहीं हुआ—तो फिर सुबह हां करने की क्या जरूरत थी, मैं अपने घर से ही साग-सत्तू खाकर आता ?

इस बार पाडेजी भी गरम हो गये—घर में तो जैसे पकवान तल कर रखा हुआ था, जो भर-पेट चढ़ा कर आते। कह रहा हूं कि खाने के समय तक रामपुर पहुच जाओगे। वहीं पहुंच कर खाना। समधियाना है, फिर वे लोग ठहरे बड़े आदमी। खुशी-खुशी जाओ, तभी वहां से खुश होकर लौटोगे। अच्छा ठहर, थोड़ा-सा गुड़ ले आता हूं।

गनेसी ने फिर कुछ कहना, चाहा मगर तब तक पांडेजी अन्दर जा चुके थे। फिर कुछ सोचकर वह डलिये का चबेना गमछे में बांधने लगा। इस बीच पांडेजी गुड़ ले आये थे। उसे भी चबेना वाली गठरी में बांधकर गनेसी ने गमछा सिर पर बांध लिया।

पाडे ने टोकरा गनेसी के सिर पर रखवा दिया। फिर गनेसी धीरे-धीरे उनके बरामदे से उतर गया। थोड़ी दूर जाने पर वह भुनभुनाने लगा—मुक्खड़ कहते है, मुक्खड़ तो खुद हैं।

सूर्य अब सिर के ऊपर आ गया था और धूप मे काफी गरमी आ गई

थी। सडक की धूल भी काफी गर्म हो गयी थी, जिसके कारण गनेसी के पाव जलने लगे थे। जी मे आता था, टोकरा वही कही फेंककर चुपचाप घर की राह पकड ले। पाडेजी पूछेंगे तो कहेगा कि सौगात पहुचा कर लौट आया।

लेकिन यह विचार उसे तुरन्त ही मस्तिष्क से निकाल देना पडा क्योकि ऐसी स्थिति मे बवाल हो जायगा। बहू बिदाई रुपये मागेगी, सो तो मागेगी ही पाडेजी भी छप्पर पीट देंगे। फिर गाव मे रहना मुश्किल हो जायगा। ऊँह! बडे आये छप्पर पीटने वाले। गनेसी ने कहा और पच्च से थूक दिया।

लेकिन पांडेजी सचमुच छप्पर पीट देते। इससे उनको कोई नही रोक सकता। गांव के बडे आदमी है। फिर पडित होने के करण पूरे गाव के लोग उनकी इज्जत करते है। बडी-बडी मूछो वाले ठाकुर भी उन्हे देखकर दूर से ही माथा नवाते हैं। गनेसी और उसके बराबर की हैसियतवालो की ता बात ही कुछ और थी।

उसके माथे पर पसीना चुहचुहा आया था। लग रहा था, जैसे पाव काप रहे हो। सचमुच काफी गरमी थी। एक तिनका भी नही हिल रहा था। सडक के किनारे के खेतो मे आदमी फसल काटने मे लगे हुए थे, आपस मे बाते करते और हाथ के हसिए से काट कर सूखी डठलो को जमीन पर बिछाते हुए।

गनेसी ने क्षण भर को खेतों मे काम कर रहे आदमियो की ओर देखा। उसके जी मे आया, किसी को पुकार कर बोझ उतरवा ले। फिर थोडी देर सुस्ता लेने के बाद आगे बढे। लेकिन फिर उसे यह उचित नही लगा। इतनी जल्दी थक जाने की बात न जाने क्यो उसे अच्छी नही लगी। अभी तो वह कोस भर ही आ पाया होगा। वह भी मुश्किल से।

लेकिन जल्दी ही गनेसी को लगा, अब वह और नही चल पायेगा। सिर का बोझ ज्यादा वजनी होता जा रहा था। पाव लडखडाने लगे थे और कुर्ता भी पसीने से लथपथ हो गया था। नही अब सुस्ता लेना ही ठीक रहेगा। सामने से आ रहा आदमी जब बगल से गुजरने लगेगा तो उसी से कहेगा—जरा बोझ उतरवा दो भइया।

गनेसी ने ऐसा ही किया। उसके सिर का टोकरा उतरवा कर वह आदमी चलने को हुआ तो उसने चिरोरी के से सहजे मे कहा—तनिक देर ठहर नही सकते भइया। जरा वोझ सिर पर रखवा देते। बडी किरपा होती।

आदमी ने तीखी दृष्टि से उसे पल भर देखा, फिर बोला—यही तो दिक्कत है। इतनी ही जल्दी थी तो फिर उतारा ही क्यों? मैं भी तो अपने काम मे ही जा रहा हू। कह कर वह खडा हो गया।

गनेसी ने एक भरपूर नजर चारों ओर दौडायी। निकट ही एक खेत की मेड़ पर चन्द जंगली वेर के पौधे, एक-दूसरे से उलझे झाडी की शक्ल मे खडे थे। उनके उस ओर थोडी-सी छाया हो गयी थी, गनेसी ने उस आदमी को सलाह-सी दी—आओ न, क्षण भर को वही छाव मे बैठते हैं।

आदमी उसके पीछे हो लिया। बोला—हमे तो रोज इसी धूप मे दौडना पडता है। धूप की परवाह करने लगें तब तो भर गया पेट।

गनेसी जमीन के उस टुकडे पर धसक गया था। अपना गमछा खोलते हुए बोला—सो तो है भइया, लेकिन सब कुछ शरीर के जोर पर निर्भर करता है। काया मे दम हो तो क्या आग और क्या पानी, सब बराबर है। मेरी बात दूसरी है और तुम्हारी दूसरी।

आदमी चुप रहा। फिर अपनी जेब मे हाथ घुमाते हुए बोला—तुम्हारे पास चूना होगा? खैनी खाने की तबियत हो रही है।

हा, है तो, गनेसी ने जेब से चूने वाली छोटी-सी डिबिया निकाल कर उसकी ओर बढ़ा दी। फिर बोला—पहले थोड़ा-सा चवेना खा लो न।

नही, तुम खाओ। मेरे पास सत्तू है। पास वाले गाव मे पहुंच कर खा लूंगा।

गनेसी ने आग्रह-सा किया—खालो भइया, गाव अभी दूर है। तब तक पेट मे पडा रहेगा।

इस बार उस आदमी ने इन्कार नही किया। गमछे पर से मुट्ठी भर चवेना उठाया और मुह मे डाल लिया। बोला—लगता है, तुम्हें अभी काफी दूर जाना है। तभी भूख लग आयी है।

हा, गनेसी ने कहा—रामपुर जाना है मुझे। वैसे भूख तो बिना कुछ

खाये चलने के कारण लगी है । तुम कौन हो भइया ?

नाई हूं । गाव के ठाकुर के सम्बन्धी के यहा जा रहा हूं, ठाकुर की मौत की खबर लेकर ।

ओह, मौत की बात से गनेसी का मन कैसा-कैसा तो हो आया था । आगे उसने कुछ नही पूछा ।

कुछ देर बाद, उस आदमी ने गनेसी की ओर चुटकी-भर तम्बाकू बढाते हुए कहा—अब उठो, देर हो रही है ।

गनेसी ने चबेना खत्म कर दिया था । उठ कर गमछा झाड़ते हुए बोला—हां-हा, मुझे तो आज ही लौटना भी है ।

फिर दोनों अपने-अपने रास्ते पर बढ गये ।

गनेसी को धूप बर्दाश्त नही हो रही थी । इतनी कड़ी धूप मे निकले उसे महीनों हो गये थे । कभी-कभी घास के लिए जाता भी तो दिन गरम होने के पहले ही लौट आता था । बहू उसे जाने भी नही देती । और महीनो की कौन कहे, इस तरह सिर पर बोझ लेकर धूप मे निकले तो उसे बरसों हो गये थे । जब तक बैंजू जीवित था, वह घर और बाहर, हल्के-फुल्के काम ही करता था । सब कुछ बहू और बेटा, दोनों संभाल लेते । दोनो की ही कोशिश रहती कि दादा जहा तक सम्भव हो, मेहनत कम ही करें ।

बैंजू की याद गनेसी को बरसो पीछे ले गयी थी । जब गनेसी की पत्नी मरी थी, बैंजू मुश्किल से तीन बरस का रहा होगा । उसी समय से गनेसी घर और बाहर सभी कुछ सम्भालता रहा था । दिन भर दूसरो के खेत मे हल जोतता, फिर शाम को घर का काम-काज करता । खुद खाना पकाता, बर्तन-बासन करता, चूल्हा झोकता और साथ ही बैंजू की देख-रेख भी करता । बैंजू को तो वह अपने से अलग एक क्षण के लिये भी नही करता । जब हलवाही जाता, तब भी बैंजू उसके पीछे होता और लौटते समय भी ।

फिर जब बैंजू की मसें भीग आयी थीं, गनेसी ने उसकी शादी कर दी थी । बहू के आ जाने से घर हरा-हरा सा लगने लगा था । और फिर-जैसे-जैसे बैंजू की उमर चढती गई थी, गनेसी घर-द्वार की चिन्ता से निश्चिन्त रहने लगा था ।

सड़क पर एक जगह धूल की काफी मोटी परत जमा हो गयी थी,

जिसमें पांव पड़ जाने से गनेसी का बदन लड़खड़ा गया था। 'अरे बाप रे! समुरी धूल की गरमी तो जैसे जान ले लेगी। हे भगवान, रामपुर पहुंच पाऊंगा भी या यही रास्ते मे ही मौत लिखी है।' गनेसी का मन रोने-रोने को हो आया। अगर उसे इस कष्ट का पता होता तो चाहे भूखों मर जाना पड़ता मगर वह हरगिज आने का नाम नही लेता।

उसे बहू पर एक क्षण के लिए गुस्सा आ गया। पांडेजी की इज्जत पर न जाने क्यों उसे तरस आ गया था। अगर बहू न कहती तो वह हरगिज नही आता। पांडेजी के जो जी में आता, करते। लेकिन बहू को कौन समझावे।

लेकिन बहू का भी क्या दोष! वह बेचारी तो खुद ही किस्मत की मारी है। तभी तो इस उमर में ही औरतपना छोड़कर घर-द्वार की चिन्ता मे चौबीसों घण्टे घुलती रहती है। नही, बहू जैसी औरत होनी मुश्किल है। साक्षात लक्ष्मी है उसकी बहू। कितनी फिक्र करती है वह गनेसी की, जैसे वह भी दूध पीता बच्चा हो।

गनेसी को याद है, जब बैजू मरा था, उसके कुछ ही दिनों बाद बहू का बाप आया था। यह कहने कि वह किसी दूसरे के घर मे बैठ जाये। गनेसी को सब-कुछ याद है। यह भी कि कैसे बहू ने अपने बाप को झिड़क दिया था कि दो-दो बच्चो के होते वह क्यो किसी दूसरे का हाथ थामेगी। जिसके साथ मड़वा में चारो ओर घूम-घूमकर सातो जनम साथ निभाने की कसम खायी थी, उसी के नाम पर, उसी के बच्चो के भरण-पोषण मे वह बची हुई जिन्दगी गुजार लेगी। गनेसी को यह भी याद है कि कैसे बहू ने उसकी ओर सकेत करके अपने बाप से तल्ख स्वर में कहा था—बच्चे तो साथ लिए भी जाऊं, मगर इस बूढ़े आदमी को कैसे छोड़ दू बाबू, जिसने मात्र इस उम्मीद मे कि जब उसके बेटे की बहू आ जायेगी, तो वह सब-कुछ से निश्चिन्त होकर बाकी जिन्दगी हँसते-मुस्कराते काट लेगा; मा बन कर अपने बेटे को बचपन से ही पाला था। नही बाबू, तुम ऐसी बात फिर मत कहना। मैं इस घर की होकर आयी थी, इसी घर की होकर जिन्दगी गुजार लूगी, जिन्दगी है भी कितने दिन की? दो दिन सुख से कटे, बचे हुए दो दिन तो रोते-रोते कट जायेंगे।

गनेसी को उस दिन ऐसा लगा था, जैसे बहू के रथ में बैजू खुद बोल रहा हो। सचमुच मेरी बहू लक्ष्मी है। उस जैसी औरतें मुश्किल से दो-चार होंगी। बैजू के मरने के बाद से तो जैसे वह औरत रही ही नहीं। मर्दों ही की तरह दिन-रात हाड़ तोड़ना और अपनी कमाई से घर का पेट पालना।

सामने से दो औरतें सिर पर कटी फसल के गट्ठर लिए चली आ रही थीं। निकट आने पर गनेसी ने एक से पूछा—रामपुर और कितनी दूर होगा बिटिया?

ज्यादा दूर नहीं बाबा, यही कोई कोस भर, फिर वह पलट कर उंगली से संकेत करती हुई बोली—वही तो है।

गनेसी ने उस ओर देखा—काफी दूरी पर गाव जैसा कुछ नजर आ रहा था। ऊंचे-ऊंचे दो-एक घर तो पहचान में आ रहे थे, बाकी सब-कुछ अस्पष्ट। फिर भी लगा कि गाव अभी काफी दूर है। थोड़ा नजदीक रहता तो वह लगातार चलता जाता। अब तो लगता है, फिर कहीं बोझ उतारना पड़ेगा। दूसरा कोई उपाय नहीं है। उसे उस औरत की बात पर हँसी आ गई—"कोस भर ही तो है बाबा!" न जाने कितने लम्बे कोस होते हैं उनके। अभी काफी दूरी तय करनी है।

सामने एक बगीचा नजर आ रहा था। सड़क की दाहिनी ओर। जरूर वहां कुआ होगा, गनेसी ने सोचा। वहां पहुंचकर वह किसी तरह पानी पीयेगा। भर पेट। चबेना खाने के बाद से ही उसे प्यास महसूस हो रही थी। अब रामपुर की दूरी जान कर प्यास कुछ ज्यादा ही महसूस होने लगी थी।

बगीचा शुरू हो रहा था। काफी बड़ा था—लम्बा-चौड़ा। दस कदम आगे सड़क से सटे ही मंदिर जैसा कुछ लग रहा था। आगे बढ़ने पर गनेसी ने देखा, वह मंदिर ही था। आगे थोड़े से फूल लगाये हुए थे। 'जरूर वहां कोई रहता होगा', गनेसी ने सोचा और चाल तेज कर दी।

मंदिर था तो वैसे छोटा-सा मगर सुन्दर था। चारों ओर लगी, छोटी-सी मगर सुन्दर फुलवारी को देख कर लगता था, इसकी नियमित देखरेख की जाती है। मंदिर के बरामदे में किसी का बिछावन मोड़ कर रखा हुआ

था। पास ही दीवार से टिका कर एक लाठी खड़ी की गई थी। इन चीजों को देखकर गनेसी को विश्वास हो गया कि वहां कोई उपस्थित है। उसने जोर से आवाज लगाई—कोई हो तो जरा इधर आना भइया।

तुरन्त ही मन्दिर से पिछवाड़े के एक आदमी निकला। भीगी देह पर गमछा लपेटे हुए। गीली धोती को निचोडते हुए उसने पूछा—बोझ उतारोगे क्या?

हां, जरा यह किरपा कर दो बाबा। उस आदमी की बढी हुई दाढ़ी को देख कर गनेसी ने उसे कोई साधू समझा। इसलिए बोझ उतर जाने पर उसने दोनों हाथ जोड़कर उसे प्रणाम किया—पांव लागू महाराज जी।

वह आदमी बरामदे पर चढ़ गया था वहीं से बोला—मैं साधू-वाधू नहीं हूं बाबा। बस किसी तरह मंदिर की देख-रेख कर देता हू।

जो भी हो, मेरे लिए तो साधू ही हो—गनेसी ने कहा और मंदिर के पिछवाड़े बढ़ गया। वहीं कहीं कुआं था।

कुआं बिल्कुल पास ही था। जमीन की सतह के बराबर ही उसकी जगत् थी। वहीं एक छोटी-सी बाल्टी रखी हुई थी और पतली रस्सी भी। कुएं से पानी निकाल कर गनेसी ने भर पेट पानी पिया फिर क्षण भर अपने चारों ओर देखा और मंदिर की ओर बढ गया।

अब जाके जी में जी आया। प्यास के मारे जान निकली जा रही थी। बरामदे पर बैठ कर पांव सीधे करते हुए गनेसी ने उस आदमी से कहा।

उस आदमी ने कोई जवाब नहीं दिया। वह बिछावन को खोले हुए हुए था। उसने एक गठरी निकाली। उसमें रोटियां थी। बोला—खाओगे? अभी गाव से मांग लाया हूं।

नहीं, मैंने चबेना खाया था। बस जोरों से प्यास लगी थी,पानी पीकर बुझ गई। गनेसी ने कहा—अब तो सौगात लेकर जल्दी से रामपुर पहुंच जाऊं, तभी भोजन करू।

सौगात लेकर? किसके यहा?

हरिहर मिसिर के यहां।

तब तुम सूखी रोटियां क्यों खाओगे भाई।

गनेसी ने कुछ नहीं कहा। जल्दी उठ खड़ा हुआ।—जरा बोझ सिर पर रखवा दो बाबा।

उस आदमी ने पास रखे अलमुनियम के लोटे से हाथ धोकर गनेसी के सिर पर टोकरा रखवा दिया।

बगीचे से बाहर आने के बाद गनेसी को पहले ही जैसा कष्ट महसूस होने लगा। वही तेज धूप और सड़क की तपती हुई धूल। पांव फिर जलने लगे थे। खैर अब तो किसी तरह पहुंचाना ही है, वरना इस दोपहरी मे तो आदमी घर से बाहर हो नहीं निकल सकता। गनेसी ने सोचा।

गांव अब साफ नजर आने लगा था। गनेसी का मन संतोष से भर गया। आखिर वह पहुच ही गया। चलो, छुट्टी हुई। हरिहर मिसिर के दरवाजे पर पहुंच जाने का मतलब है, सभी दुखों से पार पा जाना। सिर का बोझ उतर जायेगा, सो तो उतर ही जायेगा, पेट भी भर जायेगा। और लौटते समय मिसिर बाबा विदाई भी देंगे ही। खातिर होगी सो अलग। हो सकता है, मिसिर बाबा आज उसे रुकने के लिए भी कहें। लेकिन वह रुकेगा नहीं। बहू अकेली घर मे है। और फिर समय खराब हो गया है। वैसे भी गांवों में गरीब लोगों की इज्जत पर तो सबकी आंख लगी रहती है। कब मौका लगे कि लूट लें। नहीं, वह जरूर लौटेगा।

बहू फिर याद आ गयी थी गनेसी को। उनका दिन भर दूसरो के घरों मे काम करना, दूसरों के खेतों मे काम करना, फिर अपने घर के पिछवाड़े वाली जमीन मे मौसमी साग-सब्जियां उगाना, उन्हें बेचना, गाय के लिए घास लाना, खिला-पिला कर उसको दुहना और फिर उसका दूध लेकर घर-घर घूम कर बेच आना—सभी काम वह खुद करती। गनेसी कुछ करना चाहता भी तो वह उसे मना कर देती—तुम अपनी देह की फिक्र करो दादा। खांसते-खांसते तो तुम्हारा खुद ही बुरा हाल है।

इतना ही नहीं, विधवा होने बाद से बहू काफी गंभीर भी हो गयी थी। पहले तो राह चलते, काम करते वह किसी से दो बातें हंस कर भी कर लेती थी, मगर जब से वैजू मरा है, उसने अपने को बिल्कुल बदल डाला

था। बातें अभी भी सबसे करती, लेकिन मतलब से ज्यादा एक शब्द भी नही। नही ही वह किसी से डरती थी। कहती, जब अपनी मेहनत की कमाई खाती हूं, तब फिर किसी से डरूगी क्यों? कोई सेंत-मेंत तो कुछ देता नहीं है। सबको मेरे काम से मतलब है, तो मुझे भी अपनी मजदूरी से मतलब है। सचमुच वह साक्षात् लक्ष्मी है।

गाव अब बिल्कुल पास आ गया था। लौटने की बात मन मे थी। इसलिए गनेसी की चाल खुद-ब-खुद तेज हो गई।

दरवाजे पर पहुचकर गनेसी ने देखा, वहा कोई नही था। उसने इधर-उधर देखा, फिर दीवार का सहारा लेकर, सर का बोझ धीरे-से उतारकर दालान के बरामदे में पडी चौकी पर रख दिया। फिर जोर से आवाज लगाई—पडितजी।

कौन है? घर के अन्दर से एक मर्दानी आवाज आई थी—ठहरो, आ रहा हूं।

गनेसी वही बरामदे के कोर पर खम्भे का सहारा लेकर बैठ गया। दालान अभी नया-नया ही बना था। रगाई-पुताई और पक्की दीवारो के कारण काफी सुन्दर लग रहा था। सामने थोड़ी दूर पर ईंटो का एक काफी बडा चबूतरानुमा स्थान था, जिस पर पशुओ के खाने के लिए नाद गड़े गये थे। पास ही भूसा रखने के लिए फूस के दो खोप बनाये गए थे। चबूतरे के पीछे बड़ा-सा पक्का कुआं था, जहा डोर-बाल्टी रखी हुई थी।

घर से अभी कोई नही निकला था। गनेसी के जी मे आया, दुबारा आवाज दे। मगर फिर कुछ सोचकर चुप रहा और हाथ-मुह धोने के विचार से कुए की ओर बढ गया।

थोड़ी देर बाद हाथ-मुह धोकर जब वह बरामदे की ओर आया तो उसने देखा कि पकी हुई उम्र का एक आदमी चौकी पर बैठा हुआ है। उसने माथा नवाकर उस आदमी को प्रणाम किया—पाव लागू पडितजी।

जीते रहो। एक खनखनाती-सी आवाज हवा मे तैर गई—कहा से आना हुआ है?

जी, हसनपुरा से पंडितजी।

अच्छा, तो भूषण की ससुराल से आये हो। क्या हाल है गगा पाडे का ? मजे मे है न ?

जी, सब आप लोगों की दया से ठीक है पंडितजी। बाबा ने यह चिट्ठी दी है, कहकर गनेसी ने चिट्ठी उनकी ओर बढा दी।

पडितजी ने चिट्ठी ले ली, फिर अपने नौकर को आवाज दी— इन्दरदेव है हो !

इन्दरदेव आया तो पडितजी ने उससे टोकरा अन्दर ले जाने के लिए कहा। फिर उसके पीछे-पीछे खुद भी अन्दर चले गये।

थोडी देर के बाद गनेसी को घर के अन्दर कुछ शोर-सा सुनाई पडा। लगा जैसे कई लोग एक साथ जोर-जोर-से बोल रहे हो। इसी बीच किसी औरत की रुलाई भी सुनाई पडने लगी थी, क्रमश. तेज होती चली गई। गनेसी को जिज्ञासा तो हुई, परन्तु पूरी स्थिति से अवगत होने का कोई रास्ता नही था।

तभी पडितजी बाहर आये। उनके पीछे-पीछे इन्दरदेव भी आया। सर पर वही टोकरा लिये। टोकरा नीचे उतरवा कर पंडितजी ने गनेसी से कहा—यह सब तुम वापस ले जाओ भाई। हमे नही चाहिए यह सब। साथ ही गगा पाडे से यह भी कह देना कि आइन्दा हमारे यहां कुछ भेजने की जरूरत नही। जाओ, ले जाओ।

गनेसी भौंचक्का रह गया। वापस ले जाने की बात से नही, बल्कि इतना भारी टोकरा फिर उतनी दूर सर पर ढोकर ले जाने के खयाल से। उसके शरीर मे झुरझुरी-सी हो आई। डूबते हुए स्वर मे बोला—मुझसे कुछ गलती तो नही हुई महाराज !

अरे नही, तुमसे क्या गलती होगी रे, गलती तो हमसे हो गई जो उस लुच्चे के यहा बेटा ब्याह दिया। बेईमान ने कहा था कि महाराज जी, *अभी शादी-ब्याह की शुभ घडी मे आप मुह मत खोलिए। अभी मेरे हाथ* तग हैं। मौका मिलते ही आपको रेडियो भिजवा दूगा। जब भेजने का समय आया तो चिट्ठी लिख भेजी है कि इस बार क्षमा करेंगे, अगली बार आपके मन की मुराद पूरी कर दूगा। साला समझता है, हम रेडियो के लिए तरस रहे हैं। अरे वह तो एक बात हो गई थी। हसी-खुशी का मौका

था और आदमी कब से मन मे साध पाले हुए था कि बेटे के ब्याह मे रेडियो दहेज लेंगे। लेकिन इतने भुक्खड़-कगाल के यहा बेटे का ब्याह होगा, यह हमने कहां सोचा था! सब किस्मत की बात है। खैर, तुम जाओ, और हा, मेरी बात गगा पाडे से जरूर कह देना।

गनेसी की समझ में नही आ रहा था कि ऐसी परिस्थिति मे वह क्या कहे। कैसे कहे कि कितने कष्ट से वह यह बोझ यहा तक ले आया है, कि फिर उतनी दूर वापस ले जाना उसके लिए कितना कष्टकर है। अनायास ही उसके मुह से हताशा का स्वर फूट पडा—रख लीजिए पंडितजी, किसी की इज्जत का सवाल है।

पंडितजी भडक उठे—इज्जत का सवाल है तो है। तुम्हारी इज्जत का सवाल तो नही है न? तुम चुपचाप जाओ।

गनेसी के लिए अब कुछ भी कहना शेष नही था। चुपचाप वह खडा हुआ। इन्दरदेव ने टोकरा उसके सर पर रखवा दिया।

भीतर आगन से आने वाली रुलाई अब और तेज हो गई थी।

अपनी अब तक की जिन्दगी मे गनेसी को इस तरह की स्थिति से कभी साबका नही पड़ा था। सवेरे से लगातार चलता जा रहा था, वह भी बिना भर-पेट खाये। अब न जाने कब तक गाव पहुचेगा। पहुच पायेगा भी या नही, रह-रहकर उसके दिमाग मे यह बात उठती। समझ मे नही आ रहा था कि दोष किसको दे।

सूर्य अब ढलने पर था, मगर गर्मी कम नही हुई थी। उल्टे, उमस और ज्यादा बढ गई थी। हवा तो सवेरे से ही बन्द थी। धूल मे पैर जल रहे थे सो अलग।

गनेसी को पाडेजी के समधी पर गुस्सा आ गया। अपने झगडे मे मेरी जान ले ली। इतनी भी आदमियत नहीं कि पानी के लिए भी पूछ लेते। बनते है बड़े आदमी। बड़े होंगे लेकिन आदमी तो किसी रूप मे नही हैं। जानवर है, निरे जानवर।

गनेसी को जोरों की भूख लग आयी थी—भूख लगती भी कैसे नही। इतनी देर तक भला आदमी खाये-पीये बगैर चलता है! अब तो बिना खाये उससे चला नही जायेगा। कुछ-न-कुछ करना ही होगा। बगीचे वाले

साधू बाबा से ही वह कुछ माग लेगा। वह बेचारे तो उसी समय पूछ रहे थे। बगीचा तो अब आ भी चला है।

बगीचे वाले मन्दिर के पास पहुचकर गनेसी ने बरामदे की ओर देखा। वहा बिछावन उसी तरह मोडकर रखा हुआ था। मगर लाठी वहा नही थी। इसका मतलब साधू बाबा भी कही चले गये। भाग्य ही ऐसा है गनेसी का। उस समय पूछ रहे थे तो पकवान खाने की आस मे रोटी नही खाई। अब रोटी के भी लाले पड गये। कोई बात नही, वह पानी ही पीयेगा। भर-पेट पानी।

गनेसी ने टोकरा किसी तरह उठाकर बरामदे पर रख दिया। फिर वही बैठा रहा। जरा पसीना सूख जाये तब पीयेगा पानी, नही तो नुकसान करेगा।

पेडो के नीचे की छाया मे वातावरण काफी आरामदेह महसूस हो रहा था। गनेसी ने गमछा बिछा दिया और लेट रहा।

सडक के उस पार वाले खेत मे चने के पौधे लहलहा रहे थे। पौधे अभी पके नही थे, अलबत्ता फले खूब थे। गनेसी के दिमाग मे अचानक यह बात याद आई—कुछ चने के पौधे ही उखाड लाये वह। कुछ तो पेट मे जायेगा। यही होगा कि लौटने मे देर होगी। देर होगी तो होगी। जान तो बच जायेगी न ?

गनेसी चने के पौधे ले आया और फलियो को तोडकर खाने लगा।

चने खाने के बाद जैसे प्राण लौट आये हों। थोडी देर पहले की अपनी हालत याद करके उसे पसीना आ गया। कितनी भूख लगी थी उसे। नही, अब वह इस तरह कभी कही नही जायेगा। अव्वल तो कही जायेगा ही नही। यह उम्र भला कहीं आने-जाने की है। वैसे कभी गाहे-बेगाहे जाना पड ही गया, तो कुछ-न-कुछ खाने के लिए रख लेगा, तब निकलेगा घर से। लेकिन पहले घर तो पहुच जाये। घर पहुचना जरूरी है।

गनेसी ने फुर्ती से टोकरा उठाकर सर पर रखा और सडक पर चल पड़ा।

अब दिन ढलने-ढलने को हो आया था। थोडी ही देर मे सूर्य भी डूबने

वाला था। अब वातावरण काफी ठण्डा हो गया था। हवा धीरे-धीरे बहने लगी थी और अब धूल में भी वह तपन नहीं थी।

गनेसी अपने से काफी तेज चल रहा था। उसे किसी भी हालत में घर लौट जाना है। किसी भी हालत में। यह लौटना कितना जरूरी है, गनेसी ही जानता है। कौन जाने किसके मन में कब पाप जगे और'''।

गनेसी आगे नहीं सोच सका। नहीं, उसकी बहू के साथ वैसा करने की किसी को हिम्मत नहीं पड़ेगी। साल-भर पहले, इसी मौसम में एक दिन जब वह जनकसिंह का खेत काटकर शाम को घर लौट रही थी, तब रास्ते में उनके बेटे ने कुछ कह दिया था। फिर तो बहू ने उसकी गत बना दी थी। कई दिन तक बिचारे का घर से बाहर निकलना मुश्किल हो गया था, लाज के मारे। नहीं, कोई बहू के साथ कुछ करने की हिम्मत नहीं करेगा।

लेकिन तुरन्त ही गनेसी का जी शंका से भर गया। गांव में कुछ भी हो सकता है। किसी भी कमजोर आदमी की इज्जत पर हाथ पड़ सकता है। अभी तो महीना भी नहीं लगा होगा, बनवारी के घर में घुस गये थे लोग। सरे-आम। फिर शोर मच गया तब जाकर भागे बदमाश। लेकिन उस दिन के बाद, लगातार कई दिन तक बनवारी के छप्पर पर ढेले गिरते रहे—बिल्कुल ओलों के समान। गांव में चर्चा थी कि यह सब बनवारी की बेटी के चलते हो रहा है। न जाने क्या बात थी। असली बात तो भगवान ही जाने।

शाम का धुंधलका छा गया था। गनेसी ने और तेजी से अपने पांव बढ़ाये।

पांडेजी के दरवाजे पर पहुंचकर गनेसी ने टोकरा उतारकर रख दिया और हांफते-हांफते पांडेजी को पुकारा। पांडेजी घर में ही थे। वहीं से उन्होंने उसे जवाब दिया—अभी आया गनेसी, बड़ी देर लगा दी।

पांडेजी ने बाहर आकर एक नजर गनेसी पर डाली, फिर उनकी नजरें टोकरे पर स्थिर हो गई। अचानक उनकी त्यौरी चढ़ गई और उन्होंने गरजकर पूछा—तू बीच रास्ते ही से लौट आया है क्या?

नहीं बाबा, बीच रास्ते से ही क्यों लौट आता। बिटिया के दरवाजे से

लौटा दिया। रेडियो नहीं रहने के कारण समधीजी ने सौगात वापस कर दी। इसमें मेरा क्या कसूर है मालिक ?

पाडेजी ने एक उड़ती-सी नजर फिर गनेसी पर डाली और भुन-भुनाये—ससुर कहता है मेरा क्या कसूर है। हरामी ने जब सवेरे-सवेरे ही खाने के लिए हगामा किया तभी से मुझे लग रहा था कि कुछ-न-कुछ अनर्थ होकर रहेगा। फिर उन्होंने टोकरा उठाया और घर मे चले गये।

गनेसी देर तक वही खडा रहा। अब उसकी रही-सही उम्मीद भी जाती रही। क्या कहेगा वह बहू से, जब वह विदाई के रुपये के बारे मे पूछेगी। नही, पडित जी से कुछ मागेगा जरूर। आखिर उसे दिन-भर की मजदूरी भी चाहिए कि नही ?

गनेसी वही खडा रहा। देर तक खडा रहा। इस बीच पाडेजी के घर मे तेज और फुसफुसी की कई आवाजें गूजने लगी थी। बीच-बीच मे पाडेजी की गरजदार आवाज भी झन्नाटे से गूज जाती थी।

गनेसी बहुत देर तक वही खडा रहा। एक बार तो उसके जी में आया कि चल ही दे। लेकिन नही यू खाली हाथ घर जाना ठीक नही रहेगा। अरसे बाद तो उसने शरीर-तोड मिहनत की है। कुछ ले जायेगा तो बहू खुश होगी। नही, वह पाडेजी से कुछ लेकर ही जायेगा।

तभी पाडेजी बाहर आये। गनेसी को देखकर तमक गये—क्यो रे, तू अभी तक यही खडा है ? अपने घर क्यों नही जाता ?

गनेसी एकाएक पहले का सोचा, सब-कुछ भूल गया। चलने के लिए पाव खुद-ब-खुद आगे बढ गये। लेकिन तुरन्त ही वह पलटा—बाबा, रामपुर में एक पैसा भी नहीं मिला।

पाडेजी का गुस्सा आसमान पर चढ गया। हाथ उठाकर बोले—तू जाता है कि नही रे। एक तो सब कुछ चौपट कर दिया, अब ऊपर से पैसे की उम्मीद लगाये हो ? शर्म नही आती तुझे !

इस बार गनेसी भी गरम हो गया—शर्म क्यो आयेगी ? मैंने चोरी की है क्या ? जानलेवा धूप मे दिन-भर सर पर टोकरा लिये पैदल चला हू। पैसे नही चाहिए मुझे ? मेरी दिन-भर की मजदूरी दीजिये।

पाडेजी तमतमाते हुए उसके निकट आ गये—तू जाता है कि दू तेरी

मजदूरी ? साले, अपाहिज, डंडे मार-मारकर तेरी देह तोड दूगा । एक तो वैसे ही मेरा मन ठीक नही है, उस पर साले को कानून सूझ रहा है। कहकर पांडेजी घर में घुस गये।

गनेसी पांडेजी का यह रूप देखकर सकते में आ गया। सवेरे पांडेजी क्या थे, अभी क्या है ?

धीरे-धीरे वह अपने घर की ओर चल पडा।

गनेसी घर के निकट पहुंचा ही था कि मोती बाबा-बाबा कहता उससे लिपट गया। उसने उसे गोद मे उठा लिया और बरामदे में पडी खाट पर बैठा रहा। बहू सामने वाले खूटे पर बधी गाय को दुह रही थी। वही से पूछा—लौट आये दादा ?

हां, गनेसी का बुझा हुआ स्वर उभरा।

क्यो, ठीक तो हो न ? बहू के स्वर में चिन्ता का पुट था—पंडितजी के समधियाने मे अच्छी खातिर नही हुई क्या ?

गनेसी ने कोई जवाब न दिया। उससे कुछ बोला ही नही जा रहा था।

कुछ देर बाद बहू हाथ में दूध की बाल्टी थामे उसके पास आ खड़ी हुई—आखिर इस तरह गुम-सुम क्यो बैठे हो दादा। थक गये हो क्या ?

नही री, गनेसी ने कहा और सब-कुछ विस्तार से बताने लगा।

सो इसका मतलब खाली हाथ लौट आये हो। तुम लोगो की आदत ही हो गई है दादा। तुम्ही लोगों ने उन्हे इतनी छूट दे रखी है। आज वे होते तो यू ही नही लौट आते।···चलो, हाथ-मुह धोओ। कहकर बहू घर में चली गई।

गनेसी बहू के पीछे-पीछे घर में नही घुसा। वह सर पर हाथ रखकर कुछ सोचने मे निमग्न था। तभी पोते ने कहा—तुम तहा दये थे बाबा ?

गनेसी कुछ नही बोला। थोडी देर बाद, फिर पोते ने ही कहा—उन लोगो ने तुम्हे याने तो नुय नई दिया ?

गनेसी इस बार भी चुप रहा। पोते ने सर घुमाकर उसकी ओर देखा, फिर बोला—नई दिया तो नई दिया। अब मत दाना वाले के यहां।

गनेसी ने चौंककर पोते को देखा। पोता सहम गया। उसने पोते को जोर से सटा लिया और उसका सर सहलाने लगा।

प्रतिपक्ष

बगले के बाहर कई गाडिया पहले से खडी थी। उनके ड्राइवर सामने की सडक के पार वाले पेड के नीचे गप्पे लड़ाने मे मशगूल थे। सीताराम ने एक नजर उन लोगो पर डाली और गाड़ी का हार्न दबा दिया। तेज आवाज से उनकी आखें खुल गयी और वे तेजी से दरवाजा खोलने लगे। तब तक सीताराम गाडी से बाहर निकल आया था। उसने पिछला दरवाजा खोल दिया और वे अलसायी मुद्रा में बाहर आ गये।

हार्न की आवाज सुनकर बगले से दो आदमी दौडे चले आये थे। उन्होंने बगले का बड़ा-सा फाटक खोल दिया था और फाटक के दोनो किनारो पर सावधान होकर खडे हो गये थे।

गाड़ी से उतरने के बाद वे भी वही रुक गये थे। क्षण-भर के लिए उनकी दृष्टि गेट के ऊपर लगाये गये बडे से बोर्ड पर अटक गई। बोर्ड पर बडे-बडे अक्षरो मे उनकी पार्टी का नाम लिखा हुआ था। उसके नीचे गहरे चटकदार शब्दो मे प्रदेश कार्यालय अकित था। फिर नीचे सड़क का नाम और कोष्ठक मे राज्य की राजधानी का नाम था। एक कोने मे दो-दो टेलीफोन नम्बर भी अकित थे।

उन्होंने सतोष की एक लम्बी सास ली और बगले के ऊपर अपनी पार्टी के शानदार रेशमी झण्डे को देखकर गर्व से तन गये। फिर जेब से रूमाल निकालकर चेहरे पर फिराया और धोती का पल्लू हाथ मे लेकर बगले मे प्रवेश करने लगे।

सहसा उन्हें कुछ खयाल आया और वे रुक गये। पीछे मुडकर धीमे स्वर मे बोले—मेरे लौटने तक गाड़ी को अच्छी तरह साफ कर लेना। फिर

मर्जी हो तो कुछ चाय वगैरह पी लेना। पुन: गेट पर खड़े आदमियों में से एक से पूछा—और सभी लोग आ गये है?

जी हां, करीब-करीब, वह उनके साथ चलने लगा था—कई लोग तो बहुत देर से बैठे हैं। आपका ही इन्तजार हो रहा था।

अब कोई समय से पहले ही आकर बैठ जायं तो उसकी मर्जी। मुझे तो सभी काम समय पर करने की आदत है। मीटिंग कब से शुरू होने वाली थी?

जी, छः बजे से।

उन्होंने घड़ी देखी। सात बज रहे थे। न जाने कैसे आज देर हो गई, वे भुनभुनाये, फिर पूछा -- कहां बैठे हैं लोग?

ऊपर वाले बड़े कमरे में।

वे तेजी से सीढ़ियां चढ़ने लगे।

कमरे में उनके प्रवेश करते ही लोग उठ खड़े हुए। 'आइये-आइये' के शोर से कमरा एकबारगी अशांत हो उठा। इस अशांति की आड़ में छुपे अपने महत्व को समझकर वे काफी प्रसन्न हुए मगर ऊपर से उन्होंने अपना क्षोभ प्रकट किया—इस तरह शोर करने की क्या आवश्यकता है। मैं आ ही तो गया हूं। पहले थोड़ा पानी मंगवाइये।

पार्टी के अध्यक्ष काफी पकी हुई उम्र के व्यक्ति थे। उन्होंने सोफे पर एक ओर सिमटते हुए उनके बैठने के लिए जगह बनाई और कमरे के बाहर खड़े आदमी को आवाज दी—जरा एक गिलास पानी दे जाओ धनीराम।

जी, अच्छा हुजूर, बाहर से आवाज आई।

अध्यक्ष की बगल में बैठकर उन्होंने औपचारिक अन्दाज में कहा—देर के लिए कार्य-समिति के सभी माननीय सदस्यों से मैं क्षमाप्रार्थी हूं। दरअसल मैं भी क्या करूं। राज्य के कोने-कोने से दिन-भर लोग आते रहते हैं। आज की प्रतिकूल स्थिति में उनकी बातें नहीं सुनूं तो पार्टी की कितनी ज्यादा क्षति होगी, इसका अनुमान आप लोग स्वयं ही लगा सकते हैं।

जी हां, जी हां, अध्यक्ष ने कहा—लोगों की बातों को सुने बिना,

उनके सुख-दुख मे हाथ बटाये बिना आखिर हमारी पार्टी का जनाधार मजबूत कैसे होगा। दरअसल विरोधी दल के नेता के आगे मुख्यमन्त्री से कम काम थोडे ही होते हैं।

आप काम की बात करते हैं। विरोधी दल के नेता के रूप मे मेरी कार्यव्यस्तता कितनी बढ गई है, इसे तो मैं ही समझ सकता हू। जब मैं स्वय मुख्यमन्त्री था, तब कहा इतने लोगो से मिलना होता था। सारा काम अफसर लोग करते थे। अब तो दिन-भर लोगो की बातें सुनते रहो और उन्हे तसल्ली देते रहो। बडी दिक्कत है भई।

तभी धनीराम पानी ले आया था। पानी पीकर खाली गिलास उसे थमाते हुए उन्होने कहा—खैर छोड़िये यह सब। अब सीधे-सीधे एजेण्डा पर आया जाय। पहले ही काफी देर हो चुकी है।

सभी लोग एकबारगी चुस्त-दुरुस्त नजर आने लगे। अध्यक्षजी ने सामने की मेज पर पडे कागजो को हाथ मे लिया और बोले—सबसे पहले तो दलीय गतिविधियों की जिलेवार रिपोर्टिंग होगी फिर आलाकमान के निर्देश-पत्र के सभी पहलुओ पर बहस और अन्त मे दल को मजबूत करने के उपायो पर विचार। क्यो ठीक है न तिवारी जी?

ठीक ही है, मगर सब-कुछ जरा शीघ्रता से होना चाहिए। हमे काफी काम करने है।—विरोधी दल के नेता ने कहा।

दरअसल ऐसा किया जाय कि दलीय गतिविधियो की रिपोर्टिंग के स्थान पर पिछले विधानसभा-चुनावो के बाद, राज्य भर मे हमारे दल की स्थिति पर प्रकाश डाला जाय। मैं समझता हूं, ऐसा करना ज्यादा उचित होगा। हर महीने तो राज्य-कार्यालय मे प्रत्येक जिले मे रिपोर्ट आती ही है।—सामने बैठे अधपके बालो वाले दुबले-पतले आदमी ने कहा।

मैं श्रीवास्तव जी की बात का समर्थन करता हू। यही होना चाहिए —तिवारी जी ने शीघ्रता दर्शाते हुए कहा—महासचिवो मे से कोई यह काम कर सकता है।

ठीक है, अध्यक्ष जी ने कहा—मैं समझता हू, गौरी बाबू इस काम को अच्छी तरह कर सकते हैं।

गौरी बाबू ने कुछ नही कहा। वे अपनी जगह से उठ खडे हुए। 'अध्यक्ष

जी, हमारे विधान-मण्डलीय दल के नेता आदरणीय तिवारीजी और राज्य कार्यकारिणी के माननीय सदस्यो''''उन्होंने अपनी बात शुरू की और आधे घण्टे तक बोलने के बाद यह कहते हुए कि कुल मिलाकर पिछले विधान-सभा चुनावो के समय की स्थिति की तुलना मे आज हमारी पार्टी की स्थिति ज्यादा अच्छी है, वे अपनी जगह पर बैठ गये।

सो तो अच्छी होगी ही। पिछले चुनावों के समय हमारी स्थिति ही क्या थी। जब सरकार मे थे तो विधान सभा की चार सौ चौदह सीटों मे से तीन-चौथाई से ज्यादा हमारे हाथ में थी, अबकी स्थिति यह है कि मात्र चवालीस लोग ही हमारे दल के टिकट पर जीतकर विधान सभा में आ पाये हैं। खैर, अब तो आगे की सुध लेनी है। —तिवारी जी ने भारी मन से कहा।

अध्यक्ष जी ने भी उनकी हा में हां मिलाते हुए कहा—बिल्कुल ठीक कहा आपने। अब तो हमारी स्थिति मजबूत होगी ही। लोग इस सरकार की नीतियों से भी खुश नही है। आम जनता की हालत पहले से कही ज्यादा खराब हो गई। लेकिन एक बात मेरी समझ मे नही आ रही है।

वह क्या ? किसी ने पूछा।

यही कि लोग इस सरकार से असतुष्ट होते हुए भी हमारे सगठन के निकट क्यों नही आ रहे हैं ? पिछले महीने राज्य कार्यालय ने अपनी सभी जिला समितियों को स्थानीय समस्याओ को लेकर सभाएं और प्रदर्शन आयोजित करने के लिए कहा था। मगर कही से भी बहुत उत्साहवर्द्धक रिपोर्ट नही मिली।

अब इसके लिए हम क्या करें ? हमारा तो काम है, जनता को उसकी कठिनाइयों से अवगत कराना—और उनको समस्याओं के समाधान का रास्ता बताना, वही हमने किया। अब जनता है कि हमारी बातों पर यकीन ही नही कर रही है। हम लोग लाख हल्ला करते हैं, लेकिन जनता पर कोई असर नही होता और उधर से मुख्यमन्त्री या सरकार का कोई मन्त्री जब यह कह देता है कि पिछले तीस वर्षों तक जो लोग शासन मे थे, आपकी समस्याए उन्ही की देन है, तो लोग विश्वास कर लेते हैं। ये 'लोग' साले भी कम बदमाश थोड़े ही है। मरने दीजिए इन्हे।—तिवारी जी ने तैश

मे आकर कहा ।

कमरे मे एकबारगी खामोशी छा गई ।

आखिर मे चुप्पी अध्यक्ष जी ने ही तोड़ी—यहा आप गलती पर हैं तिवारी जी । जनता अगर इस सरकार के शासन मे खुशी से मरना भी चाहे तो हम उसे मरने नही दे सकते । वैसी स्थिति मे हम खुद मर जायेंगे, हमें किसी भी तरह से जनता को जमाना ही होगा । उसे इस सरकार की गलत नीतियों के विरोध मे सगठित करना ही होगा । नही तो, जनता को तो खैर उसकी हालत पर छोड दें, यह सरकार हम लोगों को तो समाप्त ही करके छोडेगी । आपने तो सुना ही होगा, सरकार भूमि-सुधार के लिए भी कोई नई योजना लागू करने पर विचार कर रही है ।

सो तो ठीक ही है साहब । इसमे कहाँ शक है कि सरकार हमारी पार्टी को समाप्त करने मे लगी हुई है । यह भूमि-सुधार की योजना तो बहाना, भर है असली निशाना तो हमे बनाया जायगा ।—एक प्रभावशाली से दिखने वाले आदमी ने कहा ।

और क्या, तिवारी ने कहा—इस सरकार को जनता की समस्याएं हल करने की थोडे ही चिंता है । ऐसी ही बात होती तो हम पर इतने आयोग क्यो बैठाये जाते । लगता है, जैसे केवल हम लोगों के शासन-काल में ही भ्रष्टाचार हुआ था । आज तो सरकारी दफ्तरो मे पहले से कही अधिक भ्रष्टाचार हो रहा है । उसे क्यो नही समाप्त करते ये लोग ?

दरअसल यह सब कुछ हमारी पार्टी को नेस्तनाबूद करने का षड्यन्त्र है भाईजी, गौरी बाबू ने कहा—मुख्यमंत्री कहते हैं कि कोई मुझ पर भ्रष्टाचार का एक भी आरोप सिद्ध कर दे तो मैं अपने पद से त्याग-पत्र दे दूंगा, जबकि सभी लोग जानते ही हैं कि वे अपने सगे-सबधियों के माध्यम से रोजाना हजारो रुपये घूस लेते हैं ।

और नही तो क्या ? कल तक दो कौडी के आदमी थे, दारोगा से लेकर कलक्टर तक सबके यहां पैरवी करते थे, आज दूध के धुले हो गये । सब साले चोट्टे हैं, तिवारी जी ने कहा—इन्हे चैन से नही बैठने देना है, नही तो ये लोग हमें जेल भेज देंगे ।

यही बात है, अध्यक्ष जी ने कहा—यह जो पार्टी-आलाकमान का पत्र

आया है, इसमें साफ लिखा है कि निकट-भविष्य में बड़े पैमाने पर हमारी पार्टी के लोगों को भ्रष्टाचार और अधिकारों के दुरुपयोग के मामलों में जेल भेजने की उच्च-स्तर पर तैयारियां चल रही हैं। हमें इस पर भी गम्भीरता से विचार करना होगा।

और क्या लिखा है आलाकमान के पत्र में ?—गौरी बाबू ने पूछा।

यही कि पार्टी के अस्तित्व को बनाये रखने के लिए वर्तमान सरकार की आम जनता-विरोधी नीतियों के खिलाफ व्यापक जन-समुदाय को संगठित किया जाना चाहिए और सरकार के लिए हर स्तर पर कठिनाइयां पैदा की जानी चाहिए।

ठीक ही है, विरोधी दल के रूप में हमारा कार्य भी तो यही है।—एक मोटे-थुलथुल शरीर वाले आदमी ने कहा।

पूरी बात तो पहले सुन लीजिए यादव जी ! अध्यक्ष जी ने कहा—लिखा है कि निकट-भविष्य में हमें राज्य की राजधानी में एक बड़ी रैली आयोजित करनी चाहिए। इस कार्यक्रम को विधान-सभा के आगे प्रदर्शन का रूप भी दिया जा सकता है। फिर उपस्थित जन-समूह को इस तरह से उत्तेजित किया जाना चाहिए कि अगले कुछ दिनों तक राज्य का राजनीतिक वातावरण काफी गर्म रहे।

बिल्कुल ठीक, तिवारी जी ने कहा—आला कमान के निर्देश का हमें ईमानदारी से पालन करना चाहिए। इसी में पार्टी की और हम सभी लोगों की भलाई है। हमें यह कतई नहीं भूलना चाहिए कि हम लोग उस संस्था के कार्यकर्त्ता हैं जिसने इस देश को अंग्रेजों से मुक्त किया, जिसने इस देश पर तीस वर्षों तक शासन किया है !—तिवारी जी काफी जोश में आ गये थे और उनका कहना बिल्कुल खुले भाषण जैसा हो चला था।

दूसरे लोग भी काफी उत्साहित नजर आने लगे थे। गौरी बाबू ने अपनी जगह पर खड़े होकर कहा—तब फिर जल्दी से हमें प्रदर्शन की तारीख तय कर लेनी चाहिए। मेरी समझ से यह काम अगले सप्ताह ही हो जाना चाहिए।

तिवारी जी की भौंहें तन गईं—आप भी पागल हो गये हैं क्या ? इतनी जल्दी भी भला कुछ हो सकता है ? वह भी ऐसे समय में जब कि हालात

हमारे पक्ष में नहीं है। अब हम शासन में थोड़े ही हैं कि जब चाहा ट्रकों और बसों में भरकर आदमियों को इकट्ठा करवा लिया और नारे लगवाकर भरपेट भोजन और नगद दस रुपये थमाकर वापस भिजवा दिया। जरा होश की बात कीजिए गौरी बाबू। जल्दीबाजी करके तो हमने देख ही लिया। अभी-अभी आप ही तो बता रहे थे कि पिछले जिला मुख्यालयों में आयोजित हमारे प्रदर्शनों के प्रति जनता ने कोई उत्साह नहीं दिखाया है। ऐसे में इस बार के प्रदर्शन में भी जल्दबाजी की गयी तो परिणाम वही होगा। फिर हम न इधर के रहेंगे और न उधर के। सोच लीजिए।

हां-हां, तिवारी जी ठीक कह रहे हैं। जल्दबाजी का काम शैतान का होता है।—कई लोगों ने एक साथ कहा।

और नहीं तो क्या, तिवारी जी ने कहा—इस प्रदर्शन को हमें ऐतिहासिक प्रदर्शन का रूप देना होगा। इसमें ज्यादा-से-ज्यादा लोगों को शामिल करने की कोशिश की जानी चाहिए।

लेकिन सबसे बड़ी दिक्कत तो यह है कि हम ज्यादा लोगों को अपने साथ ले नहीं पायेंगे। लोग तो हमारी छाया तक से ऐसे बिदकते हैं जैसे कोई मरकहे बैल से बिदकता हो। इस विषय पर गम्भीरता से विचार होना चाहिए।—यादव जी ने अपनी बात कही।

सो तो ठीक है भई, मगर हमें इतना हतोत्साहित भी नहीं होना चाहिए, अध्यक्ष जी ने कहा—आखिर हम लोग भी राजनीति से जुड़े लोग हैं। और फिर दुनिया में ऐसा भी कोई काम है क्या, जिसे करना चाहकर भी आदमी नहीं कर पाये? याद रखो, निराश सभी समस्याओं की जड़ होती है। खैर—अब मूल विषय पर आया जाय। प्रदर्शन कब होना चाहिए?

इस प्रश्न पर सभी लोग चुप्पी साध गये। लगा, जैसे सभी सोच में निमग्न हों। आखिर में यादव जी ही बोले—मेरी समझ से तो एक महीने से पहले से कुछ नहीं हो सकता।

क्यों? अध्यक्ष जी ने पूछा।

इसलिए हमें काफी तैयारी करनी पड़ेगी। अपने कार्यकर्ताओं से सपर्क करना पड़ेगा। जनता की समस्याओं का अध्ययन करना पड़ेगा। जनता के

बीच जाकर सरकारी नीतियों की पोल खोलनी पड़ेगी। तभी तो जनता हमारे साथ आयेगी।

बात तुम्हारी सही है यादव जी, तिवारी जी ने कहा—प्रदर्शन हो तो ऐसा हो कि सरकार पसोपेश में पड जाय। कुछ दिनों तक अच्छा-खासा हंगामा होता रहे।

तब हम ऐसा करें कि इन्ही सुझावो के आधार पर प्रदर्शन की तैयारियो की एक सुनिश्चित योजना बना लें, अध्यक्ष जी ने कहा—महत्वपूर्ण बात यह है कि हमारे प्रदर्शन मे ज्यादा-से-ज्यादा लोग शामिल हो। इस विषय पर मैं किसान मोर्चे पर काम करने वाले अपने मित्र त्यागी जी से अपने विचार व्यक्त करने का आग्रह करूंगा।

त्यागी जी ने जोरो से खखार कर अपना गला साफ किया, फिर बोले—

किसानों की अपनी समस्याए है और वे लोग इस सरकार से सतुष्ट भी नही हैं। ऐसे मे उनके असंतोष को किसान सभा के लोग संगठित कर रहे हैं। फिर भी सरकार-विरोधी प्रदर्शन होने के कारण, बहुत-से लोग हमारे प्रदर्शन में भी शामिल तो हो ही सकते है। लेकिन इस सम्बन्ध मे एक व्यावहारिक कठिनाई यह है कि हमें लोगों को दूर-दराज के देहातो से यहां लाना होगा। ऐसे कैसे होगा, यह आप लोग सोचिये।

अच्छी बात है, तिवारी जी ने कहा—लोग अगर हमारे साथ आ सकते हैं तो उन्हें लाया जायेगा। माना कि हमारी सरकार नही है, फिर भी हम एकबारगी बिल्कुल फटेहाल थोड़े ही हो गये है। हम उन्हे उसी तरह बसों और ट्रकों में भरकर लायेगे, जैसे पहले ले आया करते थे।

लेकिन इसके लिए तो काफी पैसो की जरूरत होगी न! त्यागी जी ने कहा।

पैसों की चिंता मत करो भाई। हम सरकार मे न सही, मगर प्रमुख विरोधी दल तो हैं ही। कौन कह सकता है कि हम अगले चुनावो के बाद सरकार मे नही होंगे? हम आयेंगे, शासन मे वापस आयेंगे। देश के उद्योग-पति इस बात को बखूबी समझते हैं। इसलिए पैसों की कमी नही होगी। क्यो शर्माजी, पार्टी-कोष की क्या स्थिति है?

शर्मा जी दल के प्रादेशिक कोषाध्यक्ष थे। बोले—पैसों की कहां कमी है। कुछ काम तो हो।

सभी लोग संतुष्ट नजर आने लगे। परम संतोष की मुद्रा में तिवारी जी ने कहा—सबसे पहले हमें अपने विधायकों की बैठक करनी होगी। उसके बाद जिला कमेटियों के पदाधिकारियों का प्रदेश-स्तर पर सम्मेलन करना होगा। फिर राज्य के विभिन्न क्षेत्रों में सभाएं करनी होंगी। ज्यादा नहीं तो दस-पन्द्रह हजार आदमी तो आ ही जायेंगे। और मैं समझता हूं, यह संख्या कुछ कम नहीं होती।

हां-हां, क्यों नहीं, तिवारी जी की बात को सामूहिक स्वीकृति मिल गयी। उन्होंने अपनी टोपी ठीक की, रूमाल को चेहरे पर फिराया और फिर किंचित् रहस्यपूर्ण स्वर में बोले—लेकिन एक बात का खयाल रखना पड़ेगा।

वह क्या? अध्यक्ष जी ने पूछा।

यह कि हमारे कार्यक्रमों को पर्याप्त प्रचार मिलना चाहिए। प्रचार के अभाव में हम कुछ नहीं कर पायेंगे।

तिवारीजी के कथन को सभी ने गम्भीरता से लिया। हां, यही सबसे ज्यादा जरूरी है। मगर मैं समझता हूं आज की परिस्थिति में यह भी कोई कठिन काम नहीं है। शर्मा जी ने कहा।

ऐसा कैसे कह सकते हैं आप?

इसलिए कि यहां से प्रकाशित होने वाले दैनिक अखबारों में दो को पिछले महीने से पर्याप्त विज्ञापन नहीं मिल रहे हैं। पिछले दिनों एक पार्टी में उनके व्यवस्थापकों से मेरी भेंट हुई थी। वे बता रहे थे कि सरकारी नीतियों की आलोचना करने के कारण सरकार ने उन्हें विज्ञापन देने कम कर दिये हैं। एक अखबार में एक मंत्री से सम्बन्धित रिश्वतखोरी की खबर छपी थी और दूसरे में मुख्यमंत्री के बेटे द्वारा सरकारी काम-काज में दखलन्दाजी का आरोप प्रकाशित हुआ था। अगर हम लोग उनको अपने विश्वास में लेने का प्रयास करें तो मुमकिन है, वे लोग हमारे हित में कुछ काम करें। मैं समझता हूं, वे ऐसा करेंगे ही। उनकी भी मजबूरी है।

तब तो ठीक है। तिवारी जी ने कहा—तुम ऐसा करो कि उन्हें

विश्वास में ले ही लो। अगर वे लोग सौदेबाज़ी करें, तब भी हमें उन्हे छोड़ना नही है। समझे!

जी!

एक काम हमे और भी करना पडेगा—अध्यक्ष जी ने कहा।

वह क्या?

छात्रो और नौजवानों को अपने प्रदर्शन में शामिल करना होगा। बिना उनके प्रदर्शन में जान नही आयेगी।

यह भी ठीक है। इस सम्बन्ध में हमारे छात्र-सगठन के अध्यक्ष बतावें कि वे क्या कर सकते हैं।

खादी का कुर्ता-पैजामा और आखों पर चश्मा चढाये कोने में बैठा एक युवक उठा और अपने लम्बे बालों को एक अजीब अन्दाज से झटक कर बोला—दरअसल छात्रो के बीच हमारी स्थिति कुछ खास अच्छी नही है। आप लोग तो जानते ही हैं कि इन्ही लोगो के कारण हमारी सरकार का तख्ता पलटा। ऐसे मे मैं क्या कह सकता हू।

कुछ तो करना ही होगा भाई। तुम ऐसा करो कि लडको के बीच जाओ। उन्हे उनकी समस्याओं से अवगत कराओ, उन्हे सगठित करो। फिर देखते हैं कि कैसे नही शामिल होते है हमारे प्रदर्शन में।

सो तो ठीक है, लेकिन यह काफी कठिन काम है।

मैं एक उपाय सुझाऊं—शर्माजी ने कहा।

कहते जाइये।—तिवारी जी ने कहा।

दरअसल दिवाकर जी को छात्रो से ज्यादा छात्राओ के बीच काम करना चाहिए। अगर उन्होंने दस लड़कियों को भी अपने साथ ले लिया तो समझ लीजिए सौ लड़के हमारे साथ आ जायेंगे।

सभी लोग हो-हो करके हस पड़े। काफी देर तक हंसते रहे। उनकी हंसी तभी रुकी जब शर्माजी ने उन्हे टोका—आप लोग मेरी बात को मजाक मे उड़ा रहे है! मैं कहता हू, साहब कि इसके सिवा दूसरा कोई उपाय नही है। जरा मेरी बात पर गम्भीरता से सोचिये तो सही।

सचमुच सभी लोग गम्भीर हो गये। शर्मा जी ने अपनी बात आगे बढ़ायी—जब हम लोग एक बड़े उद्देश्य के लिए काम करने चले है, तो

सब-कुछ जरा सीरियसली लेना होगा। मैं कहता हू, हमारी भी तो लडकिया पढती हैं कॉलेजों मे ! उनकी सहेलिया भी होंगी कि नही ? जरूर होंगी ! हम ऐसा करें कि अपनी लडकियो को अपने उद्देश्य की जानकारी दें, साथ ही उन्हे पैसे भी जरूरत से ज्यादा दें ताकि वे अपने साथ की लडकियों पर खर्च कर सकें। फिर दिवाकर जी उन लोगो से सम्पर्क करें। देखिये, कैसे स्थिति पलट जाती है। मैं कहता हू कि हफ्ते भर के अन्दर अगर हमारे साथ सैकडो छात्र नही आ जायें तो फिर मेरा नाम बदल दीजियेगा।

सभी लोग सचमुच गम्भीरतापूर्वक सोचने लगे थे। अन्त मे तिवारी जी ने कहा—शर्मा जी बिल्कुल ठीक कह रहे है। इसके लिए पार्टी-कोष से अलग पैसा निकालना चाहिए।

पैसा निकालना थोडे ही समस्या है। अगर पैसो से ही बात बन सकती है तो निकल जायगा पैसा भी। पहले दिवाकर जी बतायें तो कि ऐसा करने से क्या सचमुच हमारा काम सध जायगा।—अध्यक्ष जी ने कहा।

दिवाकर जी को शर्मा जी का यह आईडिया बहुत पसद आया था।

बोले—बिल्कुल सध जायेगा साहब। आप लोग बिल्कुल निश्चिन्त रहिए।

तब तो ठीक है—अध्यक्ष जी ने चैन से पसरते हुए कहा—अब हमें प्रदर्शन की तारीख तय कर लेनी चाहिए।—आप लोग तारीख सुझाइये।

मेरी समझ से हम लोग अगले महीने की अठारह तारीख को अपना प्रदर्शन आयोजित करें।

क्यों, अठारह तारीख को ही क्यों ?—कई लोगों ने एक साथ पूछा।

इसलिए कि यह तारीख इस तरह के प्रदर्शनो के लिए ही बनी है।

गौरी बाबू की बात से लोग एक बार फिर खुलकर हसे। फिर अध्यक्ष जी ने कहा—ठीक है भई, अठारह तारीख ही सही। इस बीच हम लोगों को तैयारी के लिए पर्याप्त समय भी मिल जायगा। आप लोगो मे से किसी को आपत्ति तो नही है न ?

जी नही, अठारह तारीख ही ठीक है। सबने अपनी सहमति जाहिर की।

अध्यक्ष जी ने अपने हाथ के कागज पर कुछ नोट किया, फिर बोले—

एक चीज पर और विचार हो जाना चाहिए।

अब विचार बाद में होगा। पहले कुछ खिलाइये-पिलाइये। तिवारी-जी ने कहा।

बाकी लोगों ने भी तिवारी जी से सहमति व्यक्त की—हां-हां, काफी देर से बैठे हैं। कुछ खाना-पीना होना ही चाहिए।

अध्यक्ष जी ने कागजों को मेज पर रख दिया और आवाज़ दी—धनीराम!

खाने के बाद सभी लोग पुनः मूल विषय पर आ गये थे। हां तो क्या कह रहे थे आप? तिवारीजी ने पूछा।

यही कि हमारे प्रदर्शन का रूप क्या रहेगा?

क्या मतलब?

मेरा मतलब है, वह शान्त होगा कि अशान्त?

सभी लोग सोचने लगे। फिर एक-एक करके सभी की दृष्टि तिवारी-जी पर स्थिर हो गई। लोगों का मंतव्य भापकर उन्होंने कहा—मेरी बात मानें तो प्रदर्शन शान्त नहीं होना चाहिए, क्योंकि इस प्रदर्शन से हमें एक बड़े आन्दोलन की शुरुआत करनी है। तभी हमारी पार्टी फिर से राजनीतिक महत्व प्राप्त कर सकेगी और हम वर्तमान सरकार पर चौतरफा दबाव डाल सकेंगे। और जहां तक मैं समझता हूं, शान्तिपूर्ण प्रदर्शन के द्वारा हमारा यह उद्देश्य सिद्ध नहीं होगा।

लेकिन ऐसा होने पर सरकार भी तो चुप नहीं रहेगी। वह लाठी-चार्ज करवायेगी। हमारा प्रदर्शन ज्यादा उग्र हुआ तो संभव है, गोलियां भी चल जायें, फिर बहुत से लोगों की जानें जा सकती हैं। हम लोग भी गिरफ्तार किये जा सकते हैं।

आप भी अजीब आदमी हैं गौरी बाबू। आप क्या समझते हैं, आप जेल नहीं जायेंगे? परिवहन मंत्री के रूप में आपने जो कुछ किया, क्या उसके लिए यह सरकार आपको जेल नहीं भेजेगी? जेल तो जाना ही होगा। आपको, मुझको, हम सबको। अब आप खुद सोचिये, आन्दोलन-कारी के रूप में जेल जाना अच्छा रहेगा या भ्रष्टाचारी के रूप में?

गौरी बाबू से कुछ कहते नहीं बना। सहमे हुए अन्दाज़ में बोले—आप

समझते हैं, मैं जेल जाने से डरता हू
आन्दोलन मे मैं भी जेल गया था। दा
नही है। हो सकता है कि उस दिन हम
भी हो। है कि नही ?

इसके लिए आप निश्चिन्त रहि
चलेंगी। लेकिन वे हमें नही लगेंगी।
पुलिस वालो पर रोड़े और पत्थर फि
चार्ज करेगी तब हमारे साथ की भी
आयेगी। और तब हम वहाँ नही रहें

गौरी बाबू के चेहरे पर संतोष उ
तो गोलियाँ चलनी ही चाहिए। फिर
करके रख देंगे। लेकिन एक बात का

किस बात का ? तिवारी जी ने पू

यही कि हमारे प्रदर्शन मे आम ल
तभी हमारा प्रचार महत्त्व पा सकेगा

इसके लिए आप निश्चिन्त रहिए
आप ही सोचिये, ट्रकों-बसो पर सवार
लिए कौन आयेगा ? वही न जिसे र
रुपये मिलेंगे। आप लोग बिल्कुल निश्
दारी यह रही कि वे अखवार वालों
को अपने विशेष ढंग से संगठित करें
कर आदमियों को लाने का प्रबंध क
बात लाठियो और गोलियो की, तो उ
अगर सरकार नही करेगी तो हम लोग

तो क्या हम लोग गोलियाँ भी च

नही साहब, तिवारी जी ने रहस्
लाठियाँ और गोलियाँ पुलिस ही च
चाहे। आखिर दस रेंज के डी०आई०

तब तो ठीक है। गौरी बाबू ने

। ऐसी बात नही है। बयालीस के
असल बात गिरफ्तार होने की ही
मे से कुछ लोग गोलियों के शिकार

ए। गोलियाँ चलेंगी और जरूर
म लोग तो उन लोगों मे से होंगे जो
जायेंगे। बाद मे जब पुलिस लाठी-
ड खुद-ब-खुद रोड़ेबाजी पर उतर
।।
भर आया—अगर ऐसी बात है तब
तो हम जबरदस्त आन्दोलन खड़ा
ध्यान रखा जाना चाहिए।
छा।
लोगों की संख्या ज्यादा से ज्यादा हो।

गौरी बाबू। तिवारी जी ने कहा—
होकर हमारे प्रदर्शन मे भाग लेने के
जाना पाँच रुपये के स्थान पर दस
चिन्त रहिए। शर्मा जी की जिम्मे-
ही तैयार करें। दिवाकर जी छात्रो
। यादव जी ट्रको और बसों मे भर
रें। पैसे चाहे जितने खर्च हो। रही
सकी व्यवस्था सरकार खुद करेगी।
करेंगे ?
लायेंगे ?
यपूर्ण ढंग से मुस्कराते हुए कहा—
लायेगी। सरकार चाहे अथवा नही
जी० टंडन किस दिन के लिए हैं ?
जैसे अचानक सब-कुछ समझते हुए

कहा—अब देखेंगे कि सरकार कैसे चलती है !

और कितने जाँच-आयोग विठाती है। यादव जी ने कहा।

और किस तरह हमें भ्रष्टाचार के जुर्म मे जेल भिजवाती है। शर्माजी ने कहा।

और किस तरह हमारी पार्टी को पुनः सत्तारूढ़ होने से रोकती है। अध्यक्ष जी ने कहा।

सभी लोग जोरों से हँस पड़े। फिर अध्यक्ष जी ने अपने कागजात समेटते हुए कहा—अब आज की बैठक समाप्त की जाती है। बाहर से आये मित्रों के लिए नीचे ठहरने का प्रबन्ध है। आप लोग अब आराम करें। फिर तिवारी जी से बोले—आप जरा रुकिये गौरी बाबू, आप भी।

हम लोग जायें ? शर्मा जी और यादव जी ने एक साथ पूछा।

अरे ठहरो यार, हम लोग भी तो चल ही रहे है, तिवारी जी ने कहा।

अन्य लोग बाहर चले गये थे। तिवारी जी ने पूछा—क्या बात है भाई।

कुछ नहीं, सोचा आप लोगों की कुछ विशेष सेवा कर दूँ। अध्यक्ष जी ने मुस्कराते हुए कहा और मेज की दराज से एक बोतल निकाल कर सामने रख दी।

अरे, यह क्या ? मद्य-निषेध का जमाना है भाई। तिवारीजी ने कहा।

होगा लेकिन हमें तो इसका भी विरोध ही करना है, कहते हुए अध्यक्ष जी उठे और कोने की आलमारी में से गिलास निकाल लाये। फिर उन्होंने बोतल खोलकर सबके गिलास भर दिये।

सभी लोग अध्यक्ष जी की मेज के इर्द-गिर्द आ खड़े हुए। उन्होंने अपने-अपने गिलास उठा लिये। फिर एक-दूसरे की ओर देखा और गिलासों को एक-दूसरे से टकराया। तभी अध्यक्ष जी ने कहा—अपने आदरणीय नेता तिवारी जी की सेहत के लिए।

नहीं, तिवारी जी ने कहा।

फिर ? बाकी लोगों ने एक साथ कहा।

एक-दूसरे की सेहत के लिए ! गौरीबाबू ने कहा।

नहीं, तिवारी जी ने फिर कहा।

तब? सबों ने एक साथ पूछा।

प्रदर्शन में मरने वालों की आत्मा की शांति के लिए।—तिवारी जी ने कहा।

कमरा ठहाकों से गूंज उठा और सबों ने अपने गिलास होंठों से लगा लिए।

दूसरा आदम

इस बार गाव का मुखिया कौन हो रहा है भिखारीसिह ?

मुझे क्या मालूम। और अगर मालूम हो भी तो फिर मुझे उससे क्या लेना-देना ?

क्यो ? जगदीश मास्टर के स्वर में आश्चर्य का पुट है।

क्यों क्या, मुझे कौन मुखिया होना है मास्टर। बेरुखी से कहता है भिखारीसिंह बिल्कुल उदासीन स्वर में।

जगदीश मास्टर का उद्देश्य भिखारी को उदास करना नही था। ऐसी बातें तो आये दिन हुआ करती हैं भिखारी के बैठके में। प्रत्येक शाम को, अपनी तीन-चार बीघों की खेती से निपट कर छोटे किसान यहां आते हैं, शहर से कमा कर लौटने वाले मजदूर भी यहाँ आते है—चना-चबेना फाकते हुए। बाबुओं के खेतों में काम करने वाले मजदूर यहा आते हैं और यहा आता है जगदीश, गांव के लोअर-प्राइमरी स्कूल का मास्टर। बगल में अखबार दबाये। बैठक में कदम रखते ही देश-विदेश की खबरें पटाखों की तरह फट पड़ने लगती हैं उसके मुँह से। आज भी अखबार में उसने पढ़ा था अमुक-अमुक गावों में पचायत के चुनाव होने वाले हैं। गांवों की सूची में उसके गाव का नाम भी था। इसीलिए आते के साथ ही, आज उसने भिखारी से पूछा था—इस बार गाँव का मुखिया कौन हो रहा है भिखारी सिंह ?

मगर भिखारी को विषय से सर्वथा उदासीन पाकर जगदीश मास्टर को आश्चर्य होता है—तुम मुखिया नहीं हो सकते ? क्यो ?

इस बार हल्के से हँस देता है भिखारी। बिल्कुल फीकी-सी हँसी।

मास्टर के इस आश्चर्यजनक वयों पर। फिर कहता है—मैं मुखिया इसलिए नही हो सकता क्योंकि मैं गरीब हूँ। मेरे यहा ट्रैक्टर नही है। हाथी नही है। मेरे यहां बैलों की चार जोड़िया नही हैं और मेरे... ।

मगर भिखारी की बात पूरी नही होने देता है मास्टर। ठहाके लगाने लगता है—बिल्कुल पागलो की तरह। और क्योंकि जगदीश मास्टर हँस रहा है, इसीलिए वहा उपस्थित दूसरे लोग भी हँसने लगते हैं। हँसने की बात पर गौर किए बगैर। लेकिन इस हँसी का अर्थ ढूँढने की चेष्टा करता है भिखारी—आखिर तुम लोग हँसते क्यो हो ?

भिखारी को उत्तर देने के लिए मास्टर को चुप होना पड़ता है। उसकी देखा-देखी अन्य लोग भी चुप हो जाते है। अब मास्टर कहता है—तुम बात ही ऐसी कह रहे हो। अरे भाई, अब अपने देश मे प्रजातन्त्र है और यह प्रजातन्त्र पच्चीस वर्षों से स्थापित है यहा। अब अपने देश में अमीर-गरीब, ठाकुर-चमार, हिन्दू-मुसलमान, सब एक समान हैं। सबको बराबर अधिकार हैं। इक्कीस बरस की उमर का प्रत्येक आदमी वोट दे सकता है। और इस वोट मे बड़ी ताकत है भिखारी सिंह। इसी वोट मे अपने देश मे कोई कुछ भी बन सकता है। मुखिया, एम० एल० ए०, एम० पी० कुछ भी। समझे ?

सब किसी को आश्चर्य होता है मास्टर की बात से। सचमुच अपने देश मे ऐसा है क्या ? नहीं। झूठ कहता है मास्टर। कहा है सबको बराबर अधिकार यहां ? उसी दिन, जब गाव मे मछली बिकने आई थी तो चमार टोले वाले अपने टोले मे ले गये थे। अभी मोल-तोल चल ही रहा था कि बाबुओं को इसकी खबर लगी। वे आये और मछली वाले को अपने साथ ले गये। टरखू और मोहर चमार के यहा तो औरतें मसाला तक पीसने लग गई थी इसीलिए वे लोग बाबुओ के आगे गिड़गिड़ाये थे। मगर उनकी गिड़गिड़ाहट से बाबुओं के कान पर जूँ तक नही रेंगी, वे मछली वाले को जबरन लिवा ही ले गये। चमारों का पूरा टोला खड़ा था वहा, मगर कोई चूँ भी नही कर सका। अब अगर सब किसी को बराबर अधिकार होने की बात कुछ भी सच होती तो फिर ऐसा क्यो होता? नही, ऐसा नही है इस देश मे। मास्टर झूठ कहता है। लछमन दुसाध कहता है—धत् मास्टर

साहब, तुम तो हमी से मजाक करने लगे।

मजाक ! मास्टर को लगता है जैसे किसी ने उसके बदन से करेंट छुआ दिया हो। तड़पते स्वर मे कहता है—नही-नही.. मैं तुम लोगों मे झूठ नही बोलूंगा ? अरे ये बातें महज कहने को थोडे ही है। यह सब तो अपने देश के सविधान मे लिखा है।

सब लोग मुंह-बाये पी रहे है जगदीश मास्टर की बातों को। वह आगे कहता है—लेकिन तुम लोगों को इतना आश्चर्य क्यों हो रहा है ? किसी दूसरे आदमी ने तुम लोगो को ये बातें नही बताईं क्या ?

अरे, हमें कौन बताता है मास्टर जी...यह तो एक तुम ही हो जो हमे यह सब बतलाते हो। तुम्हारे पहले तो जितने भी मास्टर आये थे इस स्कूल मे, सब बेनीसिंह के यहा रहते थे। उन्ही के यहा खाते थे, बदले मे उनके बच्चो को पढाते थे।—कई स्वरों की टकराहट के मध्य मास्टर को यही बातें सुन पडती है।

भिखारी को अपने मुखिया हो सकने की बात पर अब भी विश्वास नही होता। अविश्वनीय लहजे मे फिर एक बार पूछता है—सच कहते हो मास्टर, क्या मैं मुखिया हो सकता हूँ ?

हां भाई, तुमसे किसने कहा है कि गरीब आदमी मुखिया नही हो सकता ?

और मास्टर के इस प्रश्न के उत्तर मे भिखारी को उस दिन की याद आती है—जब वह आदित्य सिंह के यहा गया था। आज से तीन बरस पहले। वैसे तो भिखारी अपना बैठका छोड़कर कही नही आता-जाता, मगर उस दिन गया था। और गया था इसलिए क्योंकि उसे बुलाया गया था एक विशेष काम के लिए। वह विशेष काम था गाव के नये मुखिया का चुनाव। शुरू से ही ऐसा हुआ करता है। प्रत्येक पाँचवे बरस गाव के ठाकुरो की पूरी बिरादरी किसी एक जगह बैठती है और उसी दिन गाव का नया मुखिया चुना जाता है। और क्योंकि भिखारी भी ठाकुरो की ही बिरादरी का था इसलिए ऐसी सभा मे उसे भी बुलाया जाता है। उस दिन भी भिखारी को इसी कारण से बुलाया गया था। अभी मुखिया के लिए नामों की चर्चा आरम्भ भी नही हुई थी कि भिखारी को मजाक सूझा।

और उसने कह दिया था—तुम मुझे ही मुखिया क्यों नहीं बना देते इस बार।

और सब लोग हँसने लगे थे। भिखारी भी हँसा था मगर थोड़ी ही देर में उसकी हँसी चुक गयी थी। कितना हँसता? मगर वे लोग थे कि थम ही नहीं रहे थे। बस ठहाके और ठहाके। भिखारी को टोकना पड़ा था—वाह! इसमें इतना हँसने की क्या बात है? मैंने कौन-सी ऐसी हँसी वाली बात कही है? मैं मुखिया नहीं हो सकता क्या? जब पिछले अठारह वर्षों में केवल हमारी ही बिरादरी के लोग तो मुखिया हुए हैं। जब आदित्य-सिंह मुखिया हो सकते हैं, जब पारससिंह मुखिया हो सकते हैं, जब जीतन-सिंह, बेनीसिंह और रामायणसिंह मुखिया हो सकते हैं और जब अपनी बिरादरी के कुल नौ घरों में से सात घरों के लोग मुखिया हो सकते हैं, तब मैं क्यों नहीं हो सकता? अब तो मैं और शिवशंकर सिंह दो ही आदमी बचे हैं न? और क्योंकि शिवशंकर सिंह मुझसे उमर में छोटे हैं, इसलिए इस बार मुझे ही मुखिया बना दो। भिखारी के स्वर में दृढ़ता सम्मिश्रित थी इस बार।

मगर लोग थे कि भिखारी की बात समाप्त होते न होते फिर जोरों से हँसने लगे थे। भिखारी को बुरा लगा। तल्ख स्वर में बोला—वाह! यह क्या बात हुई कि मैं इतनी गम्भीरता से बात कर रहा हूँ और तुम लोग उसे हँसी में उड़ाये दे रहे हो। साफ-साफ कह दो, मुझे मुखिया बनाओगे कि नहीं इस बार?

भिखारी के स्वर की तेजी ने लोगों को चुप करा दिया था मगर तुरन्त ही उससे भी तेज स्वर में आदित्य सिंह बोल पड़े थे—क्या बढ़-बढ़ कर बोले जा रहा है रे भिखारिया? तब से सुन रहा हूँ।

सच ही तो कह रहा हूँ। इस बार मुखिया बनने की मेरी बारी है, मुझे बनाओ।

मुखिया बनेंगे! स्वर को ऐंठते हुए आदित्यसिंह कहते हैं—इतना ही सच कहने वाले हुए हो तो यह सचाई क्यों नहीं समझते कि लगा-लुच्चा मुखिया नहीं बन सकता। इतना ही शौक है मुखिया होने का तब समूचा खेत-बधार बेच देने की क्या जरूरत थी? तुम्हारा ही तो भाई है महेन्दर,

जो आज बड़ा आदमी कहला रहा है। इसलिए कि उसने बाप-दादो की जायदाद को चौगुना कर लिया है। और वही तुम हो कि सब बेच-बाचकर सचमुच के भिखारी बन बैठे हो।

भिखारी चुपचाप रह गया था। कैसे कहता उन लोगों से कि महेन्दर ने बड़ा आदमी कहलाने के लिए कैसे-कैसे घृणित कर्म किये हैं—कि मा-बाप की जिन्दगी मे ही महेन्दर पूरी जायदाद का आधा भाग लेकर अलग हो गया था—कि मा-बाप के मरने पर कफन से लेकर श्राद्ध तक एक पैसे का भी खर्च नही किया था महेन्दर ने—कि सात-सात बहनो की शादियाँ अकेले भिखारी ने ही की थी, महेन्दर ने तो एक पैसा भी नही दिया था। मगर भिखारी ये सब बातें किससे कहने जाय। फिर ये बातें इन लोगों से छुपी हैं क्या? फिर तानाकशी करते हैं। करते हैं तो करें। मैं भिखारी ही सही।

लेकिन मन की बातो को प्रकट नही होने दिया भिखारी ने। सीधे-सीधे मतलब की बात पर केन्द्रित हो आया—कुछ भी हो, मैं जो हूँ, वही तो रहूँगा। तुम लोगो को इस बात मे कोई मतलब नही होना चाहिए। साफ कहो कि मुझे मुखिया बनाओगे कि नही?

सब लोगों को झुँझलाहट होने लगी थी। इस साले पर क्या सवार हो गया है आज। आखिर मे जीत्तन सिंह ने झिड़कने के से भाव मे कह दिया—समझ लो, हम तुम्हें नही बनायेंगे मुखिया।

कैसे नही बनाओगे? भिखारी अड़ गया—तुम अपने लोग बने तो कुछ नही, अब मुझे बनाने के समय नानी मरने लगी। जब सात घरो मे से पाँच घरों के लोग मुखिया हो सकते है तो मैं क्यो नही हो सकता? मैं भी तो तुम्हारी बिरादरी का हूँ।

अरे भिखारी, गठिया के दर्द से कराहते हुए बेनी सिंह ने कहा—बिरादरी का होने भर मे कोई मुखिया नही होता रे। मेरी बात मान, इस बार शिवशंकर को मुखिया बनने दे। तू अगली बार बन जाना। समझा?

मगर भिखारी ने बात समझने की कोई कोशिश नही की। बोला—मगर यह कैसे होगा? शिवशंकर से उम्र मे मैं बड़ा हू, इसलिए पहले मेरा नम्बर होना चाहिए न?

बेनीसिंह ने तुरन्त कहा—धत् पगले ! इस बड़ाई-छोटाई का क्या मतलब ? अच्छा, एक बात बता—तेरे यहाँ हाथी है ?

नहीं ।

ट्रैक्टर है ?

नहीं ।

तेरे यहाँ चार जोडी बैल हैं ?

नहीं ।

इसीलिए तो कह रहा हूँ कि यह उम्र की बड़ाई-छोटाई कोई चीज नहीं है । तू तो जानता ही है, यह सब कुछ शिवशंकर सिंह के पास है। और मुखिया का मतलब ही है—श्रेष्ठ, प्रधान, प्रमुख । मान लो तुम मुखिया बनते हो और कल को तुम्हारे यहा कोई अफसर आ गया । अब तुम्ही कहो, तुम उनकी खातिर का खर्चा कहा से उठा पाओगे ?

भिखारी को अफसर की खातिर न कर पाने की असमर्थता दर्शाने वाला यह उदाहरण एकदम बेमानी लगा । बोला—यह कोई बात नहीं हुई । मुखिया बनाने का मन नही है तो साफ-साफ कह दो । यह झूठ-सच बतियाने की क्या जरूरत है !

हा-हा, जाओ, नहीं बनाते तुम्हें मुखिया । साले मुखिया बनेंगे । आदित्यसिंह बिगड़ने लगे थे । अब भिखारी के लिए वहां बैठना असह्य हो गया । वह गुस्से से पाव पटकता उठ खडा हुआ था ।

तभी पारससिंह और बेनीसिंह ने उसका हाथ पकड़ लिया था—अरे नहीं भिखारी, ऐसा नही करते । कहा न, अगली बार तुझे ही मुखिया बनाया जायगा ।

और भिखारी को बैठना पड़ा था उनके आग्रह पर । यह सोच कर कि इन लोगों से वैर करना ठीक नहीं । इन लोगों से वैर करने के बाद तो मुखिया बनने की बात स्वप्न में भी नही सोची जा सकती । लेकिन आज ? आज तो जगदीश मास्टर कह रहा है कि भिखारी मुखिया हो सकता है । यह उसका अधिकार है और ऐसा संविधान मे लिखा है—अपने देश के संविधान में ।

"ठीक है । अब की बार जब बिरादरी की बैठक मुखिया के चुनाव के

सिलसिले मे होगी तो मैं उन लोगों से पूछूगा कि वे लोग तीन बरस पहले ले अपने आश्वासन के अनुसार इस बार मुझे मुखिया बनायेंगे कि नही," कहता है भिखारी सिह।

और सचमुच इस बार जब नये मुखिया के चुनाव के उद्देश्य से बिरादरी बैठती है तो बिना किसी लाग-लपेट के भिखारी कह देता है—तुम लोगों को तीन बरस पहले की बात तो याद होगी जब शिवशंकरसिंह को मुखिया चुना गया था। उस समय मैंने भी स्वयं को मुखिया बनाये जाने का प्रस्ताव किया था। तब तुम लोगो ने कहा था कि इस बार न सही, अगली बार मुखिया मुझे ही बनाओगे। आज जबकि फिर से नये मुखिया का चुनाव होने वाला है, तब तुम लोगो का क्या खयाल है?

किस विषय मे?

मुझे मुखिया बनाने के विषय में, और किस विषय मे!

भिखारी की इतनी सी बात पर बिरादरी को तीन बरस पहले के ठहाके याद आ जाते हैं। ठहाके। बस ठहाके···और भिखारी को फिर एक बार भौचक्का रह जाना पडता है—भला आज क्यो हँसने लगे है ये लोग? बेरुखी से पूछता है—इस बार क्यों हँस रहे हो तुम लोग?

तुम्हारी समझ पर।—आदित्यसिंह कहते हैं और फिर एक सामूहिक ठहाका गूज उठता है।

क्यों? नही बनाओगे मुझे मुखिया?

कैसे बनायेंगे! नंगा-लुच्चा भी भला मुखिया होता है कही।

भिखारी का मुह लाल हो उठता है। घर बुलाकर यह अपमान। रुआसे स्वर मे कहता है—तब फिर क्या जरूरत थी यह कहने की कि अगली बार तुम्हें ही मुखिया बनाया जायगा?

इस प्रश्न का उत्तर देते हैं पारससिह। हसकर कहते हैं—वह तो हमने यू ही मजाक मे कहा था।

मजाक मे कहा था? भला इस तरह कही मजाक किया जाता है? ऐसा निर्मम मजाक! छी:! कहता है जगदीश मास्टर। अभी-अभी भिखारी ने उसे अपनी बिरादरी वालो के साथ हुई बातचीत का ब्यौरा

दिया था।

सभी लोगों के मन मे यही विचार है। भला इस तरह का मजाक किया जाता है। क्या नगा-लुच्चा मुखिया नही हो सकता। ऐसा घृणित व्यवहार और कहलायेंगे शरीफ!

एक बात कहू भिखारी सिंह ?

क्या है मास्टर ? कहो।

क्यों न तुम भी उन लोगों के मजाक का बदला मजाक से ही दो। सबको आटे-दाल का भाव मालूम हो जायगा। तुम्हारे पैर न पकड़ लें तो फिर कहना।

सो कैसे ?

वही तो कह रहा [illegible]।

और सचमुच आटे-दाल का भाव मालूम होने लगता है शिवशंकर सिंह को। कहा तो मौज मे आये थे बी० डी० ओ० के पास यह कहने कि इस बार भी मुखिया वही रहेंगे और कहा आते ही बी० डी० ओ० की झाड़ सुननी पड रही है—क्यों साहब, आप तो कह रहे थे कि इस बार भी आप ही मुखिया होने वाले हैं। और वह भी सर्वसम्मति से। बिल्कुल निर्विरोध। लेकिन मालूम है, क्या हुआ है ?

क्या हुआ है ? हैरानी का भाव लिये पूछते है शिवशकर सिंह।

अब यह पूछिये कि क्या नही हुआ। हुआ यह कि अब आप निर्विरोध मुखिया नही हो सकेंगे।

क्यों ?

क्योंकि आपके यहा के भिखारी ने मुखिया के लिए अपना मनोनयन प्रस्तुत किया है।

सन्न रह जाते हैं शिवशंकर सिंह। सूखे कण्ठ से पूछते हैं—सच कह रहे हैं न हुजूर ?

लीजिए, अब मैं झूठ भी कहने लगा। अरे साहब, यह सचाई तो मैं आपके भले के लिए प्रकट कर रहा हूं वरना मुझे क्या जरूरत थी आप लोगों से कहने की। यह कहिए कि आप लोग बड़े आदमी हैं, इसी से आतंकित सहानुभूति आप ही लोगों के साथ रहती है। नही तो हमे क्या ! हम तो

सरकारी आदमी ठहरे।

शाम को वेनीसिंह के यहा बाबूओ की चौपाल बैठती है। बैठने के साथ ही शिवशकर सिंह बी० डी० ओ० के यहा की बातों का रोना रोने लगते हैं, मानो उनकी नाक पर छुरी चल रही हो। उनकी बात पूरी होते-न-होते सब लोग क्रोध से कांपने लगते है।

तो इस भिखरिया की यह हिम्मत ! नामजदगी दखिल कर आया ? आदित्य सिंह का गुस्सा और तेज हो उठा है। ब्लड-प्रेशर के मरीज हैं। तडप कर कहते है —लेकिन इस ससुरे को यह बताया किसने कि मुखिया के लिए भी नामजदगी दाखिल की जाती है, वोट होता है ?

जगदीश मास्टरवा ने बताया होगा। और कौन बतायेगा ! वही साला है न अखबार दबाये घूमता है।

हा-हा, सारी बदमाशी उसी साले की है लेकिन इसको क्या कहोगें जब अपना खून ही दुश्मन हो जाय।

कौन कहता है कि भिखरिया अपना खून है। इस साले की बुद्धि और समझ तो उन छोटी जात वालों से भी गई-बीती है। ऊंचे संस्कार तो अब उसमें रहे ही नही। वह तो उन लुच्चो के जैसा ही खाता है, दिन-रात का उठना-बैठना भी उन्ही लोगों के साथ है। उसकी प्रत्येक बात मे अजब छोटापन झलकने लगा है।

खैर कुछ भी हो। कल हमें उस भिखारी के बच्चे को किसी भी तरह से समझा देना है कि वह अपनी नामजदगी वापस ले, नही तो उसकी खैर नही।—विषय का उपसंहार करते हुए आदित्यसिंह कहते हैं।

और सचमुच अगले दिन की चौपाल मे बुलाया जाता है भिखारी को। आज उसके चेहरे पर विजय का भाव है। सबको आटे-दाल का भाव मालूम हो गया है। मजाक करने चले थे। कहते थे तू लुच्चा-लफंगा है, मुखिया नही बन सकता। भिखारी नही बनेगा मुखिया, लेकिन खुशामद तो करवायेगा ही। उन लोगों से कह देगा कि देखो, तुम लोग किसी कमजोर को दबा नही सकते, किसी गरीब पर अपने धन का रौब नही गालिब कर सकते। इसलिए कि अपने देश मे प्रजातन्त्र है। यहा गरीब-अमीर सभी बराबर हैं, सबको बराबर अधिकार हैं। भिखारी के मन मे

आज जगदीश मास्टर के लिए बडी श्रद्धा का भाव है। सब उसी की तो करामात है। बड़ा गुणी आदमी है यह जगदीश मास्टर। बहुत खुश है भिखारी।

देख भिखरिया, अगर तुझे इस गाव मे रहना है तो ठीक से रह, वरना समझ ले, हम तेरी सारी शेखी तेरे अन्दर घुसेड़ देंगे ! बिना किसी पूर्व भूमिका के आदित्य सिंह कहते है।

हूँ···यह कौन सा ढग है खुशामद का ? भिखारी जैसे आसमान से गिरता है—तो इन लोगो ने खुशामद के लिए नही बुलाया है उसे ! उस पर रौब झाड़ेंगे, उसे डरायेंगे ! नही, ऐसा नही होगा। किसी के रौब मे नही आयेगा। बेरुखी से कहता है—आखिर बात क्या है ? इतना गर्म क्यो हो रहे हो ?

कह तो यू रहा है जैसे समझ ही नही रहा हो। मुखिया के लिए नामजदगी दाखिल करने के लिए तुझ से किसने कहा था रे ?—जीतनसिंह पूछते हैं।

किसी ने नही, मैंने अपने मन से दाखिल की थी।

क्यो ?

अब इस क्यो का तो कोई जवाब नही है मेरे पास। मेरे जी मे आया, मैंने दाखिल कर दी।

दाखिल कर दी, जीतनसिंह बुरा सा मुह बनाकर विष-बुझे लहजे मे कहते हैं—घर मे भूजी भाग नही है और चले हैं मुखिया बनने। चोट्टा कही का।

इस बार ताव मे आ जाता है भिखारी। तमककर वहां से चलने के लिए खड़ा होते-होते कहता है—घर मे भूजी भाग न सही, मैं तुमसे मांगने तो नही जाता।

और इस बार कई लोगो की बौखलाहट-भरी आवाजें एक साथ टूट पड़ती है भिखारी पर—देख भिखरिया, तू हम लोगों से राड़ मत मोल ले, हम तेरे अपने हैं। जैसा हम कहते हैं, वैसा ही कर।

अपने ! भिखारी के मन मे हँसी फूट पड़ती है इस सम्बोधन पर। ढंग से भिखारी तक नही कह सकते और चले हैं अपना कहने। उत्तेजना के

प्रवाह में पूर्ववत् बहता हुआ कहता है भिखारी—यह 'अपने'-बेगाने की चर्चा छोड़ो और साफ-साफ कहो कि तुम लोग चाहते क्या हो?

यही कि तुम अपनी नामजदगी वापस ले लो।

इस बात से भिखारी की उत्तेजना तूफान का रूप ले लेती है—क्यों वापस ले लूं? इसलिए कि मेरे यहा हाथी और ट्रैक्टर नही है? मगर खुले कानों से इतना सुन लो कि मैं नामजदगी का पर्चा हर्गिज वापस नही लूगा। चाहे जो हो। देश में प्रजातन्त्र है। हर छोटे-बड़े को समान अधिकार है। मुझे राष्ट्रपति के पद के लिए भी नामजदगी दाखिल करने का अधिकार है, यह तो मात्र मुखिया का पद ही है। पढ लो संविधान, उसमे यह बात साफ लिखी है।

प्रजातन्त्र! संविधान! आश्चर्य होता है अखिलेशसिंह को। बेनीसिंह का मझला बेटा अखिलेश शहर मे वकालत करता है। कल ही शिवशकर-सिंह उसे अपने साथ लिये आये थे। यह सोचकर कि अखिलेश इस समस्या का समाधान ढूढने में मदद करेगा। यहा संविधान की चर्चा उसे चकित कर देती है। उसे लगता है, संविधान फटकर चिथडे-चिथडे हो गया है तभी तो उसके पन्ने इस गांव तक पहुचे। वरना इस गाव मे कौन जानता है ये बातें! बात बड़ी गम्भीर हो गई है, सोचता है अखिलेश।

अगले दिन गाँव के बीच वाले शिवाले पर एक सभा बुलाई जाती है, भिखारीसिंह की ओर से। गाँव की पूरी आबादी का दो-तिहाई से भी ज्यादा हिस्सा इस सभा मे उपस्थित है। सबको पता है कि इस बार मुखिया का चुनाव वोट द्वारा होगा। सभा मे भिखारीसिंह बताता है कि कल बाबुओं की चौपाल में उसके साथ कैसा व्यवहार किया गया। घर लौटते समय सभी लोगों मे अतिरिक्त उत्साह नजर आता है। इस बार भिखारी को ही मुखिया बनाना है। वह अपना आदमी है, अपने बीच का आदमी है।

इधर बाबुओं के खेमे में इस सभा से अभूतपूर्व सरगर्मी फैल गई है। अगर कही सचमुच वोट हुआ ही तब तो हो गई गड़बड़। शिवशकरसिंह मुखिया नही हो सकेंगे। उनको ये लुच्चे-लफंगे तो वोट देगे नही और बिना उन लोगों के वोट के किसी का जीत पाना नामुमकिन है। किस उपाय से

शिवशंकर मुखिया बने रह सकते हैं, यही उद्देश्य लेकर आज की चौपाल बैठी है।

मैं एक उपाय बताऊं?—अखिलेशसिंह अपने बुजुर्गों से इजाजत चाहता है।

हां-हां, कहो। तुम्हें इसीलिए तो बुलाया गया है।

तो फिर कैसा रहे अगर उन लोगों को वोट देने ही नहीं दिया जाये?

बात तो ठीक है तुम्हारी, मगर लाठी के हाथ उन्हें रोकना तो ठीक नहीं होगा न? और इस प्रकार वे लोग मानेंगे भी नहीं। अपनी ही बिरादरी का भिखारी जो उनके साथ है। असली लड़ाई भी तो उसी से है न, इसीलिए उसी को दबा देने से सारा मामला ठण्डा पड़ जाएगा। उन लुच्चों से फौजदारी करने की सलाह तो मैं नहीं दूंगा।—जीत्तनसिंह अपनी दूरदर्शिता प्रकट करते हैं।

मगर मैं फौजदारी करने की बात करही कहां कह रहा हूं। मेरा उपाय तो इस तरह का है कि सांप भी मर जाये और लाठी भी न टूटे।

वह कैसे?

और अखिलेशसिंह उन्हें बतलाता है। सबको लगता है, इस उपाय से ज्यादा सही उपाय हो ही नहीं सकता। यह उपाय जरूर कारगर होगा।

अखिलेश के सुझाव के अनुसार वैसे सभी लोगों को अगले दिन चौपाल में बुलाया जाता है जिन्होंने भिखारीसिंह को मुखिया बनाने की बात पर काफी उत्साह प्रकट किया था। जगदीश मास्टर को भी खबर दी गई थी लेकिन उसने यह कहकर कि मुझे भिखारीसिंह के साथ शहर जाना है, साफ इनकार कर दिया। लेकिन बाबुओं को भी उसके न आने की कोई चिन्ता नहीं है। न आये। अकेला चना क्या खाक भाड़ फोड़ेगा!

बाबुओं की ओर से उन लोगों से बातें करने का वही तरीका प्रयोग में लाया जा रहा है, जो एम० एल० ए० या एम० पी० के चुनावों में प्रयोग किया जाता रहा है। पहले की ही तरह इस बार भी आदित्यसिंह ही खड़े होते हैं उन लोगों से बातें करने के लिए। ये कहते हैं—अब तक तो तुम लोगों को पता हो ही गया होगा कि इस बार मुखिया के चुनाव में वोट पड़ने वाला है। भिखारीसिंह और शिवशंकरसिंह के बीच। हम लोग शिवशंकर-

सिंह की तरफ हैं और जानना चाहते हैं कि तुम लोग किस ओर हो ?

आप लोगों से उल्टा थोड़े ही रहेंगे मालिक। हम तो आपकी प्रजा हैं। जिस ओर आप लोग रहेंगे, समझ लीजिए, हम लोग भी उधर ही हैं।

तो ठीक है। अगर तुम लोग हमारी तरफ हो, तब फिर सोमवार को तुम लोगों को वोट देने नहीं जाना होगा।

यही बात प्रत्येक चुनाव के पहले बाबुओं की ओर से कही जाती है। और जो हर बार इन 'सुच्चों' को स्वीकार करनी पड़ती है। विवशत.। कौन बैर करे इन बाबुओं से। वह भी वोट के लिए। वोट तो महज एक ही दिन होगा लेकिन इन बाबुओं के साथ तो जन्म-भर रहना है। लेकिन इस बार आदित्यसिंह की इस सलाह से एक अजीब किस्म का सन्नाटा कायम हो जाता है। ऐसा सन्नाटा जिसमें बेचैनी को जबरन दबाया गया हो। इस सन्नाटे को भंग करता है हरखू—

एक बात कहूं मालिक ?

क्या है ? कहो !

एक अरज है मालिक। अरज यह है कि अब मेरी मरने की उमर हो चली है लेकिन मैंने आज तक कभी वोट नहीं दिया है। सो आपसे प्रार्थना है कि इस बार मुझे वोट देने दिया जाये। जरा देखना चाहता हूं कि वोट कैसे दिया जाता है।

हरखू के इस आग्रह पर बाबुओं की नजरें एक-दूसरे से टकराती हैं। इसी टकराहट के मध्य विचार-विनिमय होता है और अन्त में कहा जाता है—ठीक है। एक वोट तुम दे लेना।

मैंने भी आज तक वोट नहीं दिया है। मुझे भी देने दिया जाये।

मुझे भी मालिक···

मुझे भी······

इन आवाजों का शोर बाबुओं को परेशान कर देता है। अरे बाप ! यह तो बड़ी भारी साजिश है सालों की। अगर इन्होंने वोट दे ही दिया तो फिर बाकी ही क्या रह जायेगा ? इस बार तो ये साले बड़ी चालाकी से मूंड़ देना चाहते हैं। नहीं, किसी को वोट नहीं देने दिया जायेगा। अपनी आवाज में अतिरिक्त गरज पैदा करते हुए आदित्यसिंह कहते हैं—किसी

को वोट देने की जरूरत नहीं है। वैसे ही ठीक है।

सबको लगता है, जैसे वे किसी व्यूह में घिर गये हों। इस व्यूह को तोड़ने की कोशिश करता है चन्दर—हरखू का बेटा। निश्चयात्मक स्वर में कहता है—कुछ भी हो, मैं तो अब वोट जरूर दूंगा।

मैं भी दूंगा—ऐसा कई लोग कहते हैं। इन स्वरों में दृढ़ता है। इस दृढ़ता को झुठलाना चाहते हैं जोरावरसिंह—कैसे दोगे? हम कहते हैं, वोट नहीं देना है किसी को।

आपके कहने से क्या होता है? मेरी उमर इक्कीस बरस से ज्यादा की है, इसलिए वोट देना मेरा अधिकार है। जाकर देख लो, संविधान में साफ यह बात लिखी है। जगदीश मास्टर से मिली जानकारी का उपयोग करता है चन्दर।

संविधान! इस कहार के छोकरे के मुंह में संविधान कहाँ से आ गया! बेड़ा गर्क। बाप-रे-बाप! सोचता है अखिलेश—यह जगदीश मास्टर तो बड़ा खतरनाक आदमी है साहब!

लेकिन आदित्यसिंह इन बेकार की बातों को सोचने में वक्त जाया नहीं करते। अखिलेश की सलाह का अक्षरशः पालन करते हुए कहते हैं—अच्छा ससुर, वोट दोगे न! दो, लेकिन उसके पहले जिस-जिसने हम लोगों का एक पैसा भी लिया है, उसे लौटाना होगा। जल्द-से-जल्द!

लेकिन आपके पैसों का तो हम ब्याज देते हैं।—चन्दर अब भी तर्क करता है।

लेकिन आदित्यसिंह तर्कों की लड़ाई में उसे उखाड़ फेंकते हैं—नहीं चाहिए हमें तुम्हारा ब्याज। सोमवार को पहले हमें मूल ही वापिस कर दो और उसके बाद दो अपनी मर्जी से वोट। वोट देना तुम्हारा अधिकार है न? मगर इतना और सुन लो—हमारे भी कुछ अधिकार हैं और उनके अनुसार वोट के बाद से हमारी जमीनों में तुम लोगों का हँगना-मूतना सब बन्द।

अरे बाप! ऐसा! तब फिर हम लोग जीयेंगे कैसे? आदित्यसिंह की बात से सबको सिहरन-सी होने लगती है। जहन्नुम में जाये वह वोट। अब

हँगना-मूतना कौन बन्द करवाये इस वोट के लिए। नही देंगे हम लोग वोट।

सभी लोग उठ खड़े होते हैं। उनकी सोच को व्यक्त करता है चन्दर—छोडो मालिक, हम लोग वोट नही देंगे। तुम लोगो से अधिक शक्तिशाली थोडे ही है यह वोट। तुम सलामत रहो। चन्दर के स्वर में अनचाहे ही पीड़ा-भाव उभर आता है।

शाम को शहर से लौटने पर भिखारी को पूरा वाकया मालूम होता है। वह सन्न रह जाता है यह सब जानकर। क्या हो गया यह सब? केवल कुछ ही घण्टो मे? सुबह तक जो लोग सभी तरह से साथ होने की बात करते थे, वे इस समय अपनी मजबूरी जाहिर कर रहे है। बगल मे बैठे जगदीश मास्टर से वह पूछता है—यह सब क्या हो रहा है मास्टर?

होने को तो यह सरासर अन्याय हो रहा है भिखारीसिंह। बिलकुल सोलह आने जबरदस्ती। अपने सविधान में तो लिखा है कि···

लेकिन मास्टर की यह बात पूरी नही होने देता भिखारीसिंह। चीख उठता है—ठेंगा लिखा है तुम्हारे सविधान मे। गोली मारो इस सविधान को मास्टर···यह सविधान हिजड़ा है, नपुसक सविधान है। आज ही गये थे न हम लोग बी० डी० ओ० के पास यह कहने कि वोट के दिन जबरदस्ती की जायेगी बाबुओं द्वारा। जवाब तो तुमने सुना था न बी० डी० ओ० का कि वह कुछ नही कर सकता। अगर वोट के दिन मारपीट होती है तो उसकी रोकथाम पुलिस करेगी। लेकिन अब तो मारपीट होने का कोई प्रश्न ही नही है। अब तो पैसे की मार से ही तुम्हारे लोग अधमरे हो गये है मास्टर। अब उनमें उठने की शक्ति ही कहा है? कहते हो कि देश में कोई कमजोर नही, सब बराबर हैं। यह है प्रजातन्त्र? अगर सचमुच यही है तब तो यह सौ बार थूकने की चीज है।

भिखारी इतना ही कहकर चुप नही रहता। वह झटके मे एक ओर बढ जाता है। जगदीश जानता है कि भिखारी इस समय कहा जायेगा। कुछ बुरा होने की आशंका से वह भी उसके पीछे चल पडता है।

बाबुओ की चौपाल मे पहुंचकर भिखारी दूने आवेश मे दहाडने लगता है—तुम लोग ठहाके लगा रहे हो यह सोचकर कि अब तुम लोगों ने मैदान

मार लिया है ? मुखिया का चुनाव जीत गये हो। मगर इतना जान लो कि इस तरह की जीत को मैं कुछ भी महत्व नहीं देता। इस तरह से जीतकर तुम कुछ भी क्यों न हो जाओ, मेरे लिए कुछ भी नहीं हो।—मुखिया चाहे प्रधानमन्त्री अथवा राष्ट्रपति, कुछ भी। अब सबको मैं अपने 'उस' पर चढ़ाऊंगा।

जगदीश मास्टर को यह देखकर आश्चर्य होता है कि चौपाल की छत से लटक रही लालटेन की कालिमा-युक्त पीली रोशनी, धीरे-धीरे बाबुओं के चेहरे पर जमने लगती है।

